॥ श्रीहरिः ॥

1922

गोरक्षा एवं गोसंवर्धन

[आजकी आवश्यकता]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

मलूकपीठाधीश्वर संत श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

इस संसारमें गौ एक अद्भुत प्राणी है, जो वास्तवमें सबके लिये कल्याणकारी एवं महनीय है। अपने शास्त्रोंके अनुसार गायमें तैंतीस कोटि देवताओंका निवास है। केवल गोमाताकी सेवासे अपने सम्पूर्ण देवी-देवताओंकी सेवा सम्पन्न हो जाती है। इसीलिये गोमाताको सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी कहा गया है। गोके दर्शनसे समस्त देवताओंके दर्शन एवं समस्त तीर्थोंकी यात्राका पुण्य प्राप्त होता है तथा गोदर्शन, गोस्पर्श, गोपूजन, गोस्मरण, गोगुणानुकीर्तन और गोदान करनेसे मनुष्य सर्वविध पापोंसे मुक्त होकर अक्षय लोकका भोग प्राप्त करता है। गौकी परिक्रमासे सम्पूर्ण पृथ्वीकी परिक्रमा हो जाती है। इस प्रकार गौ भारतवासियोंकी परम आराध्या है।

इतिहास-पुराणोंमें हम पढ़ते हैं कि प्राचीनकालमें एक-एक आश्रममें हजारों-लाखों गायोंकी सेवा होती थी। आजके युगमें ये बातें काल्पनिक प्रतीत होती हैं, परंतु राजस्थानमें पथमेड़ा नामका एक स्थान है, जहाँ एक आश्रममें एक महात्माके संरक्षणमें एक लाखसे भी अधिक गायोंका पालन-पोषण और सेवा आज भी समारोहपूर्वक सम्पन्न होती है, यह भारतवासियोंके लिये एक आदर्शरूप और प्रेरणाप्रद है।

कुछ समयपूर्व पथमेड़ा गोधाममें मलूकपीठाधीश्वर परम श्रद्धेय श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके द्वारा गोरक्षा एवं गोसंवर्धनके सम्बन्धमें एक प्रेरणास्पद प्रवचन दिया गया था, जिसे पिछले दिनों कल्याणके कई अंकोंमें शृंखलाबद्धरूपसे प्रकाशित भी किया गया। गोप्रेमी पाठकोंने इसे बहुत सराहा तथा पुस्तकरूपमें प्रकाशित करनेका भी आग्रह किया। गोरक्षा एवं गोसंवर्धनके सन्दर्भमें इस प्रवचनके महत्त्वको देखते हुए इसे अब पुस्तकरूपमें प्रकाशित किया जा रहा है।

आजके परिवेशमें गोवंशके प्रति धार्मिक एवं आध्यात्मिक चिन्तनके साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक तथा वैज्ञानिक एवं स्वास्थ्य-सम्बन्धी चिन्तनकी भी आवश्यकता है, जिसकी पूर्ति भी इस प्रवचनमें प्रायः हो जाती है।

श्रीराजेन्द्रदासजी एक प्रबुद्ध, चिन्तनशील, सामाजिक सरोकारोंसे युक्त विचारक संत हैं। आपकी भावनात्मक अभिव्यक्ति यदि सामान्यजनके चिन्तनका विषय बन जाय तो देश निश्चय ही पुनः आर्थिक समृद्धि एवं आध्यात्मिक उन्नतिके शिखरपर पहुँच जायगा।

परमात्मप्रभुसे प्रार्थना है कि प्रत्येक भारतीय गोवंशके प्रति अपने दायित्वको समझे और अपने जीवनमें उन सात्त्विक गुणोंका समावेश करे, जिसे इस पुस्तकमें इंगित किया गया है। आशा है, सुधीजन इसे पढ़कर गोसेवाके प्रति प्रेरणा प्राप्तकर विशेष श्रद्धान्वित होंगे।

—राधेश्याम खेमका
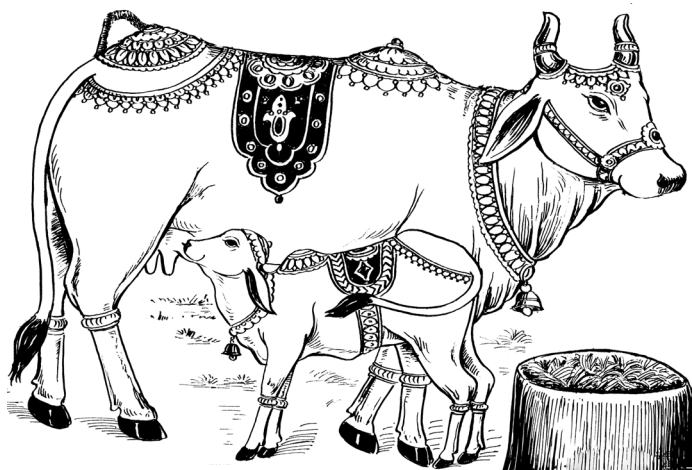
नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

श्रीमती गौओंको नमस्कार। कामधेनुकी सन्तानोंको नमस्कार। ब्रह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार। पावन करनेवाली गौओंको नमस्कार।

गोरक्षा एवं गोसंवर्धन

[आजकी आवश्यकता]

गायके तत्त्वको समझनेके लिये जैसी पावनता, निर्मलता, विचारोंकी गहनता, सूक्ष्मता होनी चाहिये, वैसी भावना उन भक्तोंमें आ सकती है, जिनका तन-मन-प्राण गोभक्तिसे अनुप्राणित हो।

जिनका अन्तःकरण अतिशय पवित्र हो जाता है, वे गोतत्त्वको समझ सकते हैं। अत्यन्त पवित्रका तात्पर्य है त्रिगुण (सत्त्व, रज, तम)-रहित चित्त और बुद्धि गुणातीत हो जाय तो गोपदार्थकी महत्ताको जाना जा सकता है।

सनातनधर्म क्या है? इसके सम्बन्धमें वाल्मीकीय रामायणके सुन्दरकाण्डमें पर्वतश्रेष्ठ मैनाक श्रीहनुमान्जीको सनातनधर्मका रहस्य समझाते हुए कहते हैं—‘**कृते च प्रतिकर्तव्यं एष धर्मः सनातनः**’ अर्थात् जिसने हमारे प्रति किंचित् भी उपकार किया है, उसके प्रति सदा कृतज्ञ रहना—यही सनातनधर्म है।

भगवान्की सृष्टिमें गायके जैसा कोई कृतज्ञ प्राणी नहीं है, प्रेमको स्वीकार करनेवाला तथा उपकारका ऐसा उत्तर देनेवाला गायके जैसा कोई प्राणी नहीं है। अड़सठ करोड़ तीर्थ एवं तैंतीस करोड़ देवताओंका चलता-फिरता विग्रह गाय है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्डपर गायका जो उपकार है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। भगवान्के सम्बन्धमें यह बात कही जाती है कि शुक, सनकादि, शेष, शारदा भी प्रभुके गुणोंका सांगोपांग वर्णन करें, यह सम्भव नहीं। उन श्रीभगवान्के चरणोंमें कोई प्रार्थना करे कि प्रभु आप अपनी उपास्य देवता गोमाताके गुणोंका वर्णन करें, उनके उपकारोंको गिनायें तो सम्भवतया भगवान् भी गोमाताकी चरणरजको मस्तकपर चढ़ाकर, अश्रुपूरित नेत्रोंसे मूक रहकर ही गोमाताकी महिमाका वर्णन करेंगे; ऐसी गोमाताकी महिमा है।

श्रीछीतस्वामीजी महाराजका प्रसिद्ध पद है—

आगे गाय, पाछे गाय इत गाय उत गाय।
गायन में नन्दलाल बसिबौही भावै॥
गायन के संग धावे, गायन में सचु पावै।
और गायन की खुर रेणु अंग लपटावै॥
गायन तैं ब्रज छायो, बैकुण्ठऊँ बिसरायो।
गायन के हेतु कर गिरि लै उठावै॥
छीत स्वामी गिरधारी विट्ठलेश वपुधारी।
ग्वारिया कौ भेषधारि गायन में आवे॥

हम गायके प्रति जैसा होना चाहिये, वैसा कोई उपकार नहीं कर पा रहे हैं, गाय ही हमारे प्रति उपकार कर रही है। अपने तन-मन-प्राणसे, अपने रोम-रोमसे, अपने दूध, दही, घृत, मूत्र एवं गोमयके द्वारा केवल अपनी उपस्थितिसे अपने श्वास-प्रश्वासके द्वारा अपने खुरकी रजसे, गोवंशको छूकर प्रवाहित होनेवाली वायुसे, जो सम्पूर्ण जगत्‌का कल्याण करनेवाली है, ऐसी गायका कितना उपकार है समाजपर, जड़-चेतन सब जीवोंपर, उसे कहा नहीं जा सकता।

गायके प्रति हम कृतज्ञ हों, यही सनातनधर्म है। हमारी सामान्य सेवासे गाय कृतज्ञ होती है। यत्किंचित् गायकी सेवा बन जाय तो उससे गोमाता इतनी सन्तुष्ट होती है, इतनी कृपा करती है कि वह अपने सेवकके प्रति कृतज्ञ रहती है।

गाय धर्मका प्रतीक है; क्योंकि गायके जैसी कृतज्ञता मनुष्यमें भी नहीं है। गायके प्रति कृतज्ञ होना यही सनातनधर्म है। आज जितनी भयंकर-भयंकर समस्याएँ हैं, उन सबका मूल कारण है रजोगुण और तमोगुणकी वृद्धि। सात्त्विकता कहीं दिखायी नहीं पड़ती। भगवान्‌ने अपनी सृष्टिमें सर्वाधिक सत्त्वगुणको गायके भीतर प्रतिष्ठित किया है। गाय सात्त्विकताका आधार एवं पूज्य है। इसलिये गायकी रक्षासे, गायकी सेवासे, गायकी भक्तिसे और गव्य पदार्थोंके सेवनसे मनुष्यमें

सात्त्विक विचार तथा सात्त्विकता आती है।

सारी समस्याओंका समाधान गोरक्षा, गोसेवासे सम्भव है। बिना गोसेवा एवं गोरक्षाके विश्वमंगल सम्भव नहीं है। जिस दिन गायका एक बूँद रक्त भी धरतीपर नहीं गिरेगा, उस दिन सारी समस्याओंका उन्मूलन हो जायगा। सारे विश्वका कल्याण हो जायगा। यही समझानेकी और सिद्धान्तकी बात है। कहते हैं—

यत्र गावः प्रसन्नाः स्युः प्रसन्नास्तत्र सम्पदः।
यत्र गावो विषण्णाः स्युर्विषण्णास्तत्र सम्पदः॥

जहाँ गायें प्रसन्न रहती हैं, वहाँ समस्त सम्पदाएँ प्रसन्न होकर प्राप्त रहती हैं और जहाँ गायें दुःखी रहती हैं, वहाँ सम्पदाएँ दुःखी होकर लुप्त हो जाती हैं।

वास्तवमें हम गायके बारेमें विचार तो बहुत अधिक करते हैं। कोई हमें गायके बारेमें वक्तव्य देनेको कहे तो हम व्याख्यान दे सकते हैं, कोई बहुत बड़ा लेख व्यवस्थित रूपसे लिखनेको कहे तो लेख भी लिख सकते हैं, लेकिन ईमानदारीसे हमारे मनद्वारा गायकी भक्ति नहीं हो पाती। फिर हमारा जो कहा सुना है उसकी कुछ भी महिमा नहीं है, यह तो हम नहीं कह सकते, लेकिन यह एक तरहसे मिथ्याचार है। इसलिये हमारे परम पूज्य गुरुदेवने कहा था कि 'देखो पण्डितजी! जिस दिन एक भी गाय नहीं रखोगे, गायकी सेवा नहीं करोगे, उस दिन गायके बारेमें एक भी वाक्य बोलनेके अधिकारी नहीं रहोगे।' इसलिये गायके बारेमें बोलनेके अधिकारी बने रहें, इसके लिये चाहे किसी भी काममें कमी आ जाय लेकिन गोसेवामें कमी नहीं आनी चाहिये। चाहे जैसा संकट भी सहन करके गायकी सेवा करनी चाहिये।

पुराणोंमें गोमहिमा है, स्मृतियोंमें गोमहिमा है, संतोंकी वाणीमें गोमहिमा है, आवश्यकता है कि वेदसे लेकर पुराण, आगम, इतिहास, ग्रन्थ और सन्तोंकी वाणियाँ—इनका विस्तृत, गहन अध्ययन हो और

एक गम्भीर चिन्तन-विचारपूर्वक समस्त उद्धरणोंको एक जगह संकलित किया जाय, संग्रहीत किया जाय, उनकी व्याख्याएँ भी प्रस्तुत की जायँ तो हम समझते हैं कि एक विशाल ग्रन्थ तैयार हो जायगा, इतनी गायकी महिमा है।

श्रीमद्भागवतमें भी गोकी महिमाका बहुत वर्णन किया गया है, उस समय गोवंश कितना समृद्ध था, इस बातकी भी चर्चा भागवतके कतिपय प्रसंगोंमें की गयी है। गोकर्णजीका प्राकट्य गोसे ही है और गायके उदरसे उत्पन्न गोकर्ण महात्मा इतने प्रभावशाली हुए कि भागवतके माहात्म्यमें इनकी उपमा श्रीरामजीसे की गयी। जैसे भगवान् श्रीरामने समस्त अवधवासियोंको अपने नित्य धामकी प्राप्ति करायी, उसी प्रकार महात्मा गोकर्णकी वाणीके प्रसादसे भगवान् श्रीकृष्णका अवतरण हुआ और भगवान्‌द्वारा भागवतके समस्त श्रोताओंको नित्य धामकी प्राप्ति करायी गयी। भागवतके प्रधान वक्ता श्रीशुकदेवजी महाराज भिक्षामें गोदुग्ध ग्रहण करते रहे—ऐसा श्रीमद्भागवत तथा अन्यान्य ग्रन्थोंमें वर्णित है।

श्रीमद्भागवतमें गायकी बहुत बड़ी महिमा वर्णित है। एक गोसेवक भक्तको केवल गोसेवासे भगवान्‌की गोचारणलीलाका दर्शन एवं नित्य लीलामें प्रवेश मिला।

जबतक हमारी बुद्धिमें यह बात बनी रहेगी कि गाय पशु है तबतक ठीकसे सेवा नहीं बन पायेगी। सेवा सदा सेव्यकी होती है, उपासना सदा उपास्यकी होती है और उपासना-सेवा तब सम्भव है, जब सेव्यके प्रति—उपास्यके प्रति हमारी यह बुद्धि बन जाय कि यह साक्षात् भगवान् है। गाय ही साक्षात् भगवान् है, यह बात हमारे ध्यानमें आ जाय और ऐसा ध्यान करके गोसेवा की जाय तो गोसेवासे भगवत्प्राप्ति हो जाय। लेकिन हमारे गायके प्रति अपराध बनते जाते हैं, इसका कारण है कि हमारी गायके प्रति पशुबुद्धि बनी रहती है।

इसलिये सेवासे जैसा लाभ मिलना चाहिये, वह लाभ फिर नहीं मिल पाता।

भगवान्‌के अभिलषित पदार्थोंमें सबसे पहला पदार्थ है गाय। गायके बिना श्रीकृष्ण प्रसन्न नहीं होते। आप षोडशोपचार क्या, भले सैकड़ों उपचारोंसे भगवान्‌का पूजन कर लें, लेकिन गो-पदार्थ यदि सेवा-पूजामें नहीं हैं तो भगवान् सन्तुष्ट नहीं। बिना गायके गोविन्दका पूजन सम्भव नहीं। भगवान्‌का वांछित गाय है।

दूसरा भगवान्‌का वांछित पदार्थ है गोप। गायोंकी रक्षा करे और गायोंका पालन करे उसे कहते हैं गोप।

अर्थात् भगवान्‌की पहली इच्छा यह है कि मैं गायोंसे घिरा हुआ रहूँ, दूसरी इच्छा है कि मैं गोपालकों, गोसेवकोंसे घिरा हुआ रहूँ और गोसेवामें सहयोग करनेवाली जो उन गोपगणोंकी गृहिणियाँ हैं, धर्मपत्नियाँ हैं, वे ही हैं गोपी। तो गायोंका जो रक्षण-पालन करे उसे गोप कहते हैं और गायोंका रक्षण-पालन करनेवाली जो हैं, उन्हें गोपी कहते हैं।

इसका मतलब है गोरक्षा, गोसेवामें जिसकी प्रवृत्ति है, वही मनुष्य गोप है तथा गोरक्षा, गोसेवामें जिसकी प्रवृत्ति है वही नारी गोपी है और गोप-गोपी श्रीकृष्णको प्रिय हैं। हम श्रीकृष्णके प्रिय पात्र बनें, इसके लिये आवश्यक है कि हम गोप और गोपी बन जायँ।

गाय, गोप और गोपी—इनके साथ निरन्तर खेलना भगवान्‌को प्रिय है। गोवंशके बीच रहकर ही ठाकुरजी आप्तकाम होते हैं और यह इच्छा भगवान्‌की व्रजमें आकर पूरी होती है—

कामास्तु वाञ्छितास्तस्य गावो गोपाश्च गोपिकाः।
नित्याः सर्वे विहाराद्यो आप्तकामस्ततस्त्वयम्॥

व्रजमें भगवान्‌की नित्य लीला होती है। अब उसका हमें अनुभव कैसे हो। शाण्डिल्य महर्षि कहते हैं कि व्रजकी सेवा करो अर्थात्

यहाँकी नदी, नद, कुण्ड, सरोवर, वन और पर्वत इनकी सुरक्षा करते हुए गायकी सेवा करो। ये जो हैं, ये गायोंके उपासना-क्रीड़ास्थल ही हैं। ये सुरक्षित रहेंगे तो गायकी सेवा बन पायेगी। आज जो गोसेवामें समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं, उसका मूल कारण यही है कि गायोंके विचरनेका जो स्थान है, वह नष्ट हो गया। हमने अपने बाल्यकालमें देखा है कि लोगोंके यहाँ बहुत-सी गायें होती थीं और उन गायोंकी सेवा करनेमें उनको कोई कठिनाई नहीं होती थी; क्योंकि सबेरे गायको खोल दिया और गाय चरानेवाला ग्वारिया गाय चराने चला गया। नदी और तालाबके किनारे गायें खूब चरतीं-घूमतीं, नदी-सरोवरका पानी पीतीं और घूम-फिर करके शाम होते-होते वापस लौट आतीं। गाय इतनी सावधान होती है कि उसको पहुँचाने तथा ले आनेके लिये कुछ दिन ही जाना-आना पड़ता है, बादमें तो वे इतनी अभ्यस्त हो जाती हैं कि झुंड-के-झुंड अपने-आप ही गाँवके किनारेतक आकर फिर अपने-अपने घरमें अपने-आप पहुँच जाती हैं और कई तो जहाँ उनके बाँधनेका स्थान है, वहाँ जाकर खड़ी हो जाती हैं। अब दिनभर खूब खा-पीकर उछल-कूद करके आयी हैं; जंगलकी शुद्ध हवा, शुद्ध पानी पीकर आयी हैं, अब रातको थोड़ा-सा उनको घास डाल दिया, थोड़ा सबेरे चारा डाल दिया और सुबह-शाम दुह लिया। पहले कम खर्च था और अब खूँटेपर बाँधके चराना है। गायको चारा नहीं रहा, घूमनेका स्थान नहीं रहा, तो जैसी स्वस्थ गाय घूम-फिर करके रह सकती है, वैसी गाय एक जगह बँधे रहकर स्वस्थ नहीं रह सकती है। गायको घूमने-फिरनेका पर्याप्त स्थान होना चाहिये, तभी गाय स्वस्थ रह सकती है। गायकी सेवा अधिक खर्चीली नहीं थी। सहज साधारण रूपसे लोग गो-पालन कर लेते थे, इसका कारण यही था कि गोचारणके लिये गोचरभूमि और जंगल सुरक्षित थे। अब जहाँ-जहाँ जंगल सुरक्षित भी हैं, वहाँपर गायको चरनेकी अनुमति नहीं है।
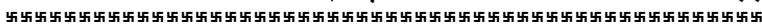
कितने दुर्भाग्यकी बात है कि जंगल गायके लिये ही है, पर वहाँ उसके प्रवेशपर प्रतिबन्ध है। जंगल तबतक हरे-भरे और शक्ति तथा ऊर्जासे सम्पन्न रह सकते हैं, जबतक उनमें स्वच्छन्द रूपसे गाय विचरण करें; क्योंकि गायें विचरण करती हुई औषधिका भक्षण करतीं तो वे दिव्य औषधीय गुण उसके दुग्धमें आते और फिर वह जो गोबर-गोमूत्र करतीं तो पृथ्वीका आहार ही गोबर और गोमूत्र है। पृथ्वी अपने आहारको प्राप्त करके पुष्ट होती, उसकी उर्वराशक्ति बढ़ती तो उसपर वृक्ष भी हरे-भरे होते।

अभी इस बार गोवर्धनके विषयमें एक महात्माजी कह रहे थे कि बड़े-बड़े पुराने वृक्ष सूख रहे हैं। इसके ऊपर अनुसन्धान किया गया तो यह बात सामने आयी कि उन वृक्षोंको खुराक नहीं मिल पा रही है। क्या खुराक? बोले, गोबर-गोमूत्रकी प्राप्ति नहीं हो पा रही है।

ईंधनके तमाम विकल्प आ चुके हैं, सौर ऊर्जा, बिजली, मिट्टीका तेल, गैस; लेकिन इसके बावजूद भी पर्वत मुण्डे हो गये, उनपर कोई वृक्ष नहीं है, जंगलोंमें पेड़ नहीं हैं, क्यों नहीं हैं? और आजके पहले ईंधनके विकल्प नहीं थे तो जंगली लकड़ी और कंडोंसे ही सारा काम होता था तब भी वन सुरक्षित थे। ऐसा नहीं कि उस समय वनका कटान न होता हो, वन काटे जाते थे उस समय भी; लेकिन गोबर-गोमूत्रके कारण उस वन्यभूमिको, उन वृक्षोंको पोषण प्राप्त होता रहता था। नये-नये वृक्ष वहाँ उत्पन्न होते रहते थे लेकिन अब वह बात नहीं है। इसलिये पर्वत और वनको सुरक्षित करनेका उपाय भी यही है कि इन्हें गोवंशके चरनेके लिये उपयुक्त बनाया जाय। गो-अभयारण्य स्थापित किये जायँ, निर्भय होकर गायें घूमें। कोई नदीका इलाका हो और बड़े पैमानेपर गोचारण हो, तो आज भी पुनः समृद्धि लौटकर आ सकती है, धरती हरी-भरी हो सकती है।

चौरासी वैष्णव-वार्ता (वल्लभकुलकी भक्तमाल)-में एक चरित्र

आता है। एक पटेल जातिका भक्त था, वह आ करके जतीपुरामें रह गया। श्रीगोसाईं विट्ठलनाथजी महाराजने उसे ब्रह्मसम्बन्ध प्रदान कर दिया और श्रीनाथजीकी गोसेवामें उसको लगा दिया। बरसातके मौसममें ऐसी वर्षा हुई कि दिन और रात पानीकी झड़ी लगी रही। गाय कहाँ खोलकर ले जायँ, इतनी तेज बारिशमें गायोंको गोशालाओंमें ही रखना पड़ा। गायें वहीं गोबर और गोमूत्र करतीं, वह भक्त गोशालाओंको साफ करता रहता। गायोंकी सेवा करता रहता। उस समय जतीपुरामें श्रीनाथजी विराजते थे और सेवकोंको मन्दिरसे प्रसाद मिलता था। उसे गोसाईं महाराजने कहा था कि जाकर प्रसाद ले लेना। सब ग्वारिया तो अपनी सेवा करके वहाँ पंगत करने चले जाते, लेकिन यह नहीं जाता। इसको सेवा करते-करते समय हो जाता और प्रसादके समय न पहुँचनेसे प्रसाद नहीं मिल पाता। स्थिति यह बनी कि जब भूखे ही गोसेवा करता रहा तब उसके ऊपर गोमाता सन्तुष्ट हुई और जब गोमाता सन्तुष्ट हुई तो ग्वारिया गोविन्द असन्तुष्ट कहाँसे रहते? ठाकुर श्रीनाथजी सन्तुष्ट हो गये और श्रीनाथजी अपना शयनभोग लेकर खुद पधारे। वह तो गोसेवा करता और ठाकुरजीकी ड्यूटी हो गयी प्रसाद पहुँचानेकी। प्रेमसे पा लेता। एक दिन ठाकुरजी अपना सोनेका थाल, झारी सब वहाँ छोड़के आ गये। खबर पड़ी कि श्रीनाथजीके शयनभोगका थाल, झारी सब कहाँ चला गया! जाकर देखा तो ग्वाल भक्तके यहाँ था। ग्वाल भक्तको गोसाईं श्रीविट्ठलनाथजीने बुलाकर पूछा तो बोला रातको तो आये थे, बोले—'तुम गोसेवा करते हो लो खाओ-पीओ मस्त रहो।' तब गोसाईंजीने कहा—ठाकुरजीको कष्ट होता है, तो कहा कि भेज दिया करेंगे तुम्हारे लिये प्रसाद। दूसरे किसी ग्वारियाके साथ प्रसाद भेज देते। प्रसाद ले जाकर रख देता और ठाकुरजी उसको बोले कि 'तुम गैया चराने हमारे संग चला करो।' वह दिनमें गैया चराने चला जाता तो कई दिनकी भोजनसामग्री प्रसाद

इकट्ठी हो गयी तो उसने कहा—महाराज! वहाँ ले जाना तो बेकार है, वह तो खाता ही नहीं कई दिन हो गये।

फिर बुलाया उसको। बोले—क्यों नहीं खाता है? बोला—महाराज! सबेरे गोसेवा करता हूँ, शामको गोसेवा करता हूँ, रातमें भी जो बन जाता है सेवा करता हूँ और दिनमें ठाकुरजी कहते हैं हमारे साथ गैया चराने चलो, तो मैं गैया चराने चला जाता हूँ। बोले—गोचारण करके लौटके आओ तब लेना चाहिये। तब बोला तब खायें कैसे? वहाँ ठाकुरजीको गोपी बढ़िया-बढ़िया छाक दे आती हैं। ठाकुरजी अपने साथ ही बिठाकर खिलाते हैं, कहते हैं तुम भी खाओ, तो खा लेते हैं। वहाँ इतना पेट भर जाता है कि फिर यहाँ खानेकी इच्छा नहीं रहती। बड़ा आश्चर्य है इतनी गोसेवासे सन्तुष्ट हो गये उसके ऊपर कि ठाकुरजीकी गोचारणलीलाका भी उसको अनुभव होने लगा और अब प्रेम ऐसा बढ़ा, ऐसा बढ़ा कि ठाकुरजी इस ग्वारिया भगतके आसनपर ही कई बार सोने चले आते, अपने निज मन्दिरको छोड़कर। अब ग्वारियाका तो कैसा आसन होता होगा, पुरानी-सी गुदड़ी थी, रज लिपटी हुई ऐसे ही बेचारा भोला-भाला भगत था, बिना पढ़ा लिखा, उसकी गुदड़ीपर ही आकर ठाकुरजी सो जाते, तब गोसाईंजीने विचार किया कि ठाकुरजीको ही रातको पीड़ा होती है, क्यों न इस ग्वारियाको ही ठाकुरजीके पास कर दिया जाय तो उस ग्वारियासे कहा—'देखो, तुम्हें रातको तो कोई सेवा रहती नहीं है, तो रातको मन्दिरके द्वारपर तुम सो जाया करो। वहीं अपना कपड़ा ले आया करो, लठिया लेकर बैठो, जबतक इच्छा हो, नामजप करो और जब नींद आये तो सो जाया करो। बोला—जो आज्ञा महाराज। वहीं आकर सोने लगा। एक दिन सो रहा था, तो सोते-सोते उसे कुछ आवाज सुनायी पड़ी कि मन्दिरका द्वार खुला, तुरंत लठिया लेकर बैठ गया कि हमें तो द्वारपाल बनाया गया है, यह कौन घुसा? किसने द्वार

खोला? देखा तो पूरे आभूषणोंसे सुसज्जित श्रीनाथजी मन्दिरसे बाहर पधारे। देखता रहा भगत। ठाकुरजी गये, पीछेसे राधारानी गयीं और गोपियाँ गयीं तो वह विचार करने लगा कि अरे! गोसाईंजीने तो मन्दिरमें अकेले ठाकुरजीको पधार रखा है, इसमें इतनी लुगाई कहाँसे घुसी थीं? ऐसा वह मनमें सोचने लग गया और वह ठाकुरजीके पीछे हो लिया कि ये रातको कहाँ जा रहे हैं, देखूँ तो सही। शरत्पूर्णिमा थी, ठाकुरजी जतीपुरासे चलकर चन्द्रसरोवर पधारे। जहाँ सूरदासजीकी बैठक है वह महारासस्थली है, वहाँ ठाकुरजी आये और दिव्य वाद्य बजने लगे, महारास होने लगा। उस ग्वारिया भगतको महारासका दर्शन होने लगा, शंकरजीको जिस रासका दर्शन करनेके लिये गोपी बनना पड़ा, उसको बिना लहंगा फरिया पहने ही महारासका दर्शन हो गया। आजके रासमें विचित्र लीला यह हुई कि पहले तो ठाकुरजी अन्तर्धान होते थे, आजके रासमें श्रीजी अन्तर्धान हो गयीं और ठाकुरजीको श्रीजीका वियोग व्याप्त हो गया। राधे-राधे कहकर भगवान् विलाप करने लगे। अब कहीं मुरली गिर गयी, कहीं लकुट गिर गया, कहीं मोर-मुकुट गिर गया। अब तो ज्यों-ज्यों भगवान्के आभूषण श्रीअंगसे गिरते चले जायँ, वह ग्वाल भगत इकट्ठा करके पोटली बाँध ले। सबेरा हुआ। ठाकुरजीकी मंगला आरतीका समय हुआ, ठाकुरजी मन्दिरमें पधारे पीछेसे वह ग्वाल भगत भी आकर बैठ गया। गोसाईंजीने स्नान करके ज्यों ही भीतर प्रवेश किया तो देखा कि मन्दिरमें शयनके बाद उतारे हुए जितने आभूषण थे, सब गायब हैं। ग्वाल भगतको बुलाया, बोले, क्यों कहाँ गये थे? मन्दिरके सब आभूषण कहाँ चले गये? उसने कहा महाराज! सबके सामने नहीं बताऊँगा, अकेलेमें बताऊँगा। कहा बताओ, क्या बात है? तो बोला, अरे तुम इनको सीधा समझते हो, ये सीधे नहीं हैं, ये तो मन्दिरमें बहुत स्त्रियाँ घुसी हुई थीं, आधी रातको ये मन्दिरसे निकलकर गये तो हमने
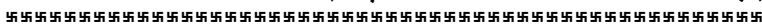
सोचा क्या पता जंगलमें रातको इनका कहीं कुछ बिगड़ न जाय, कहीं हिंसक जन्तु आक्रमण न कर दे तो हम लाठी लेकर पीछे-पीछे इनकी सुरक्षामें गये। वहाँ ऐसी-ऐसी लीला हुई। एक कोई बहुत सुन्दर-सुन्दर थी, वह जैसे ही कहीं जाकर छिप गयीं, वे रोने लगे उनका नाम लेकर, आभूषण गिरने लगे, अब जो-जो आभूषण गिरते चले गये, हम बटोरते चले गये, यह पीताम्बर है और ये आभूषण हैं।

गोसाईंजीने उसे हृदयसे लगा लिया और कहा कि केवल गोसेवासे भगवान्‌की लीलाके दर्शन और भगवान्‌की नित्यविहारकी लीलामें प्रवेश हो गया।

जबतक हमारी बुद्धिमें यह बात बनी रहेगी कि गाय पशु है तबतक ठीकसे सेवा नहीं बन पायेगी। श्रीमद्भागवतमहापुराणमें कहा गया है—

वेदादिर्वेदमाता च पौरुषं सूक्तमेव च।
त्रयी भागवतं चैव द्वादशाक्षर एव च॥

गायमें, वेदमें, ॐकारमें, द्वादशाक्षर मन्त्र (**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**)-में, सूर्यमें, गायत्री, वेदत्रयीमें अन्तर नहीं है। ये सब साक्षात् भागवतस्वरूप ही हैं। भागवतका श्रवण करना, भगवान्‌का चिन्तन करना, तुलसीकी पूजा करना, जल सींचना और गायकी सेवा करना, कहते हैं इसमें कोई अन्तर नहीं है।

हमारे महाराजजी तो कहते थे कि दो ठाकुर हैं हमारे, एक मौनी ठाकुर और एक बोलता-चालता ठाकुर। मन्दिरवाले ठाकुर मौनी ठाकुर। वे बोलते नहीं और गौमाता बोलता-चालता ठाकुर, गाय धार काढ़ने (दूधके समय)-के लिये भी आवाज लगाती है, लो भाई हमारा दूध काढ़ लो, पानीके लिये आवाज लगायेगी, चारेके लिये आवाज लगायेगी तो बोलता-चालता ठाकुर है गौमाता।

गोसेवा भगवान् श्रीकृष्णका प्रत्यक्ष आश्रय है। भगवान्‌के तीन

स्वरूप हैं—आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक। भागवत और गोमाता दोनों भगवान्‌की विभूति हैं। गोमाताकी सेवा भगवान् श्रीकृष्णके आधिभौतिक चरणोंका आश्रय है, श्रीकृष्णके चरणकमलकी प्राप्तिका प्रथम सोपान है गोमाताकी सेवा। गायका आश्रय प्रत्यक्ष श्रीकृष्णका आश्रय है, पर दुर्भाग्यकी बात यह है कि जो सरल साधन भगवान्‌की प्राप्तिके हैं, उनमें किसीका मन नहीं लगता। गायका गोबर उठाना, गायको सानी डाल देना, खुजोरा करना, गायको प्रणाम करना—कितने सरल साधन हैं भगवत्प्राप्तिके। पर इनमें मन नहीं लगता। अब नामजप छोड़कर, गोसेवा छोड़कर, संतसेवा छोड़कर हम सोचें कि ये आँख-नाक बन्द करनेसे और बड़ी-बड़ी तपस्या करनेसे भगवान् मिल जायँगे तो यह सम्भव नहीं।

ब्राह्मणी जाबालाने अपने पुत्र सत्यकामको महर्षि गौतमके पास भेजा। महर्षि गौतमने जब उसका परिचय सुना तो कहा—निश्चय ही तुम ब्राह्मण हो, तुम्हारे भीतर सत्य प्रतिष्ठित है। उस ब्राह्मण ब्रह्मचारीको धर्मकी शिक्षा प्रदान करके एक सौ गायें दे दीं और कहा—जब ये हजार हो जायँ तब इन्हें लौटा लाना, वह बालक बड़ी निष्ठासे गोसेवा करता। सत्यकाम जाबाल सौ गायें लेकर चला गया और जब गोवंशकी संख्या एक हजार हो गयी, तब गायें उसकी सेवासे सन्तुष्ट हो गयीं। उस गोवंशका एक नन्दी वृषभ ब्रह्मचारी सत्यकामके पास आया। सत्यकामने बड़े आदरपूर्वक कहा—कहो नन्दीश्वर! क्या कहना चाहते हो? उसने कहा—वत्स सत्यकाम, हम तुम्हारी सेवासे अत्यन्त सन्तुष्ट हैं। अब हमारी संख्या एक हजार हो चुकी है, अब तुम हमें गुरुगृहकी ओर ले चलो। हम तुम्हारी सेवासे सन्तुष्ट हैं, तुम ब्रह्मविद्याके अधिकारी पात्र हो, आचमन, प्राणायाम करके सावधान हो जाओ, मैं तुम्हें ब्रह्मविद्याके प्रथम पादका उपदेश करता हूँ। ऐसा कह वृषभने ही ब्रह्मविद्याके प्रथम पादका उपदेश दे दिया और कहा

कि तुम्हें अगले चरणका उपदेश अग्निके द्वारा प्राप्त हो जायगा। दूसरे दिन वह चल पड़ा, समिधा जलाकर अग्निहोत्र कर रहा था, उसी समय अग्निकी ज्योतिसे उसे ब्रह्मविद्याके द्वितीय पादका उपदेश प्राप्त हुआ। तृतीय पादका उपदेश उसे एक जलपक्षीके द्वारा हुआ और उसने कहा कि तुमको चतुर्थ पादका उपदेश तुम्हारे गुरुजी करेंगे। तो जब वह एक हजार गोवंशको लेकर गुरुजीके निकट पहुँचा तो गौतमजी आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने कहा—'पुत्र, तुम्हारा मुख तो ब्रह्मज्ञानीके जैसा दिखायी पड़ रहा है।' अर्थात् केवल गोसेवासे सत्यकाम ब्रह्मविद् हो गया।

श्रीमद्भागवतमहापुराण ग्रन्थके प्रतिपाद्य भगवान् श्रीकृष्ण हैं और श्रीकृष्णका वन्दन ग्रन्थके आदिमें '**सत्यं परं धीमहि**' कहकर किया गया है।

तात्पर्य यह है कि श्रीकृष्णमें और गायमें अन्तर नहीं है, इसलिये '**सत्यं परं धीमहि**' कह करके गायका ध्यान किया गया। भागवतके मंगलाचरणके प्रथम श्लोकके रूपमें गायका वन्दन किया गया है।

मांसाहारी लोग जो अपनेको हिन्दू भी कहते हैं, वे होटलोंमें जाकर मांस खा रहे हैं और उस मांसमें गोमांस भी पहुँच रहा है। वे कहनेको तो अपनेको हिन्दू कहते हैं और गोमांस खा रहे हैं तो बताइये वे ऐसी स्थितिमें गायके हितकी बात कैसे सोच सकते हैं? गायके हितकी बात, गायकी सेवाकी बात, रक्षा और कल्याणकी बात कैसे सोच सकते हैं? गायके रक्तकी एक बूँद किसी तालाब, कुएँमें गिर जाय, उसको पी लेनेसे जहाँ हिन्दूधर्म नष्ट हो गया, ऐसा कहा जाता था, आज वे मांस खा रहे हैं और कहते हैं हम हिन्दू हैं। वे कैसे हिन्दू हैं?

हमारे पूज्य गुरुदेव श्रीभक्तमालीजी महाराज तो बार-बार कहते थे कि पण्डितजी, सर्वाधिक अत्याचार गायपर हो रहा है। इसलिये

गायकी सेवासे बढ़कर सत्कर्म इस कलिकालमें दूसरा कोई नहीं हो सकता। महाराजजीके मुखसे हमने अनेक बार इस वाक्यको सुना। गाय, ब्राह्मण और साधु तीनोंपर संकट है, पर महाराजजी कहते थे साधु और ब्राह्मण—इनको काटनेके यान्त्रिक कत्लखाने नहीं बने हैं, इनको कहीं-न-कहीं जाकर सिर छिपानेकी जगह है, पर गायको नष्ट करनेके तो यान्त्रिक कत्लखाने बन गये हैं, गाय काटी जा रही है; इसलिये सर्वाधिक संकट गायके ऊपर है और ऐसी स्थितिमें गायकी सेवासे बढ़कर दूसरा कोई शुभकर्म नहीं है। सबसे श्रेष्ठ सत्कर्म गायकी सेवा ही है, गायकी रक्षा है। आप सोचिये, परम धर्मात्मा शूरवीर चक्रवर्ती सम्राट्के शरीरकी कितनी कीमत हो सकती है और वह भी धर्मधुरन्धर सम्राट् दिलीपके। पर परम गोभक्त दिलीप नन्दिनी गायको बचानेके लिये सिंहके आगे अपना बलिदान करनेको प्रस्तुत हो जाते हैं। वे कहते हैं—सिंह! तुम्हें खाना ही है तो तुम मुझे खाकर अपनी भूख मिटा लो, किंतु मेरे गुरु महाराजकी गायको छोड़ दो, आप सोचिये कि एक सम्राट् एक गायकी रक्षाकी कीमत अपने शरीरसे चुका रहा है और आज गाय नष्ट हो रही है।

गायकी महिमा सर्वोपरि है और वेदोंने खूब उसका गायन किया है। स्मृतियोंमें, पुराणोंमें भी गो-महिमाका खूब गायन किया गया है, वेदके मूलमें गो-महिमा है और वेदका अनुकरण करनेवाले पुराणोंने उसका विस्तार किया और उस वेदका अनुगमन करनेवाली जो स्मृतियाँ हैं, उन स्मृतियोंमें भी गौ-माहात्म्यका वर्णन किया गया है।

गायकी भक्तिकी, गायकी सेवाकी बहुत बड़ी महिमा है, जो छिपी हुई नहीं है, सब जानते हैं, पवित्र साधन है। सम्पन्न श्रीमन्त तो इस साधनको कर ही सकते हैं, जो सर्वथा अकिंचन हैं, वे भी इस साधनको कर सकते हैं। जिनके पास कुछ नहीं है, भौतिक वस्तु परमात्माने जिन्हें
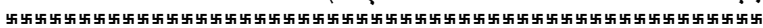
नहीं दी है। ऐसे परम अकिंचन लोग भी गोसेवा कर सकते हैं, यह ऐसा पवित्र साधन है। आपलोग कहेंगे कैसे कर सकते हैं? अरे भाई! आपके पास भूमि नहीं है, धन नहीं है, अन्न नहीं है, परंतु शरीर तो भगवान्‌ने दिया है कि नहीं? किसी गौशालामें जाकर झाड़ू लगायी जा सकती है, गोबर उठाया जा सकता है, गायकी पीठको खुजोरा किया जा सकता है और कुछ न बने तो गाय चरायी जा सकती है। इसमें पैसेकी कोई जरूरत नहीं है। जो सर्वथा अकिंचन है, जिसने एक झोपड़ी भी कहीं नहीं बनायी है, वह व्यक्ति भी गोसेवा कर सकता है, बस केवल बात यह है कि गोसेवाका संकल्प, गोसेवाकी भावना उसके चित्तमें होनी चाहिये, फिर वह गोसेवा कर सकता है।

पंढरपुरमें एक महात्मा मिले, बोले महाराज! हमारी गोमाताके दर्शन करने चलो, गोशालामें। बड़े प्रसन्न हुए हमलोग। गये दर्शन करने, चन्द्रभागाके किनारे उन्होंने गायोंको रखा हुआ था। बहुत गायें थीं उनके पास और उन्होंने अपना अनुभव बताया कि ऋषिकेशके सत्संग-भवनमें परम श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराजका प्रवचन सुन रहे थे, वहाँ प्रवचनमें स्वामीजीने गोसेवाकी बात कही। कहा अकिंचन व्यक्ति भी गोसेवा कर सकता है, बस यही सूत्र हमने बना लिया और गोसेवामें हम लग गये। यहाँ जो गाय इधर-उधर भटक रही थीं, उन्हींको हमने रखा और उनको कुछ घास-चारा ला करके डाल देना, इस तरहसे सेवा शुरू की, होते-होते बहुत लोगोंने हटानेका प्रयास किया। सरकारी लोगोंने कहा कि किसकी जमीनमें बाबाजी बैठ गये। हमने कहा—भैया! हमको हटा दो, पर गायको तो कहीं रखो। तो वे महात्मा बता रहे थे कि हम तो बिना पढ़े-लिखे हैं, पर यहाँ लोग हमको सिद्ध मानने लगे, कैसे सिद्ध मानने लगे? बोले किसीकी कोई कामना होती कि महाराज! हमारा अमुक काम नहीं बन रहा है तो हम कहते हैं गायको चारा-दाना डाल दो, ठीक

हो जायगा। गऊ माता सबको ठीक कर रही हैं और नाम हमारा हो रहा है। उन्होंने बताया कि गोमाता ही सबका कार्य कर रही हैं।

तो अकिंचन व्यक्ति भी सेवा कर सकता है, अब उस गोसेवाके साथ-ही-साथ भगवन्नाम-जप हो तब तो फिर कहना ही क्या है? इतना सरल साधन गोसेवा जिसे धनवान् नहीं धनहीन व्यक्ति भी कर सकता है, विद्वान् ही नहीं मूर्ख व्यक्ति भी कर सकता है, पर ऐसे पवित्र साधनमें जीवोंकी रुचि क्यों नहीं है? इसका कारण कि उनकी बुद्धि है कलिमलसे ग्रसित और मलिन बुद्धि, मलिन अन्तःकरणमें पवित्र साधनकी महिमा प्रकट नहीं होती। इसलिये चित्तका निर्मल होना अत्यन्त अपेक्षित है और रामनामका जप करेंगे तो सारी मलिनता मिट जायगी, चित्त निर्मल हो जायगा।

सबके आराध्य, उपास्य भगवान् और भगवान्का आराध्य उपास्य कौन है? तो श्रीमद्भागवतका अनुशीलन करनेसे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि सबके आराध्य-उपास्य भगवान् हैं और भगवान्की भी आराध्य-उपास्य गोमाता हैं, तो भगवान् इष्ट हैं और इष्टका इष्ट गोवंश है, गोमाता हैं इसलिये गाय अति इष्ट है। श्रीकृष्णावतारकी लीलामें भगवान् गोभक्ति करते हैं, कैसी अद्भुत गोभक्ति है, भगवान्की लीला गोसेवा से जुड़ी हुई है। भगवान्के प्राकट्यके समय श्रीवसुदेवजीने १०,००० पयस्विनी गायोंके दानका संकल्प किया। इसके बाद भगवान् ब्रजमें पहुँच गये, वहाँ तो कहना ही क्या? नन्दोत्सवमें बीस लाख गायोंका दान किया गया। इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योंकि ब्रज शब्दका अर्थ ही है गोष्ठ और ऐसा गोष्ठ जिसमें १,००,०००,०० (एक करोड़) गोवंश निवास करता हो।

पूतनाकी छातीसे जब ग्वाल-बालोंने ठाकुरजीको उतारा तो बोले राक्षसीने स्पर्श कर लिया है बालकको तो ये शुद्ध कैसे हो? भगवान्को कहाँ लाया गया—गोशालामें, गो-मूत्रसे स्नान कराया, गोबरका लेप

किया, गोमाताकी चरण-रज श्रीअंगमें लगायी और फिर पूँछसे भगवान्‌को झाड़ा लगाने लगे। भगवान् बड़े खुश हो रहे थे कि ये मेरा अवतार गोमाताकी भक्तिके लिये हुआ है और देखो तो सही, ये गोपियाँ हमको गोसदनमें लेके आयीं गोमाताकी चरण-रज, गोमाताका गोमय और गोमाताके पवित्र मूत्रका स्पर्श करके मेरे अवतार धारण करनेका प्रयोजन सफल हो गया। आज गव्य पदार्थोंका स्पर्श करके मैं भी कृतार्थ हो गया, यह अनुभव करते हुए भगवान् प्रसन्न हो रहे हैं।

अब ठाकुरजी कुछ और बड़े हुए तो मैया तो उन्हें मणिमय प्रांगणमें खेलनेके लिये विराजमान कर देती हैं, पर मणिमय प्रांगण और सुन्दर-सुन्दर खिलौनोंके बीचमें बैठकर भगवान्‌को अच्छा नहीं लगता। भगवान् गो-रजमें खेलने चले जाते। जहाँ गाय और बछड़े क्रीड़ा कर रहे हैं, उस रजमें ठाकुरजी खेलने जाते, मैया दौड़कर उठाने जाती, कहीं बछड़ा, बछिया, गाय लालाके ऊपर पाँव न रख दे, सींगसे कहीं प्रहार न कर दे। इस भयसे माता उनको बचानेको जाती हैं। गो-रजको श्रीअंगमें लेप करके भगवान्‌को अतिशय प्रसन्नता होती है।

पद्मगन्धा जातिकी गायें बाबाके महलमें ही निवास करती थीं, जिनके श्रीअंगसे, जिनके दुग्धसे, दहीसे, घृतसे, छाछसे खिले हुए कमलके मकरन्दकी सुगन्ध प्रकट होती; ऐसी १,००,००० (एक लाख) पद्मगन्धा गायें नन्दबाबाके गोष्ठमें थीं। उनके गोमय और गोमूत्रसे भी एक विशेष प्रकारकी कमलकी सुगन्ध आती, तो उनके गोमय और गोमूत्रके मिश्रणसे जो रज मिलकर एक विशिष्ट प्रकारकी कीच बन गयी है, उसका नाम है ब्रजकर्दम। इस गोष्ठके कीचड़में भगवान् बैठ जाते हैं और कीचमें भगवान् स्नान करने लग जाते हैं, अंजलिसे कीचको अपने और दाऊ दादाके ऊपर भी चढ़ाते हैं; इसको सन्तोंने 'पंकाभिषेक-लीला' कहा है। कीचमें सने हुए लालजीको देखकर मैया कहती हैं कि 'अरे कन्हैया! मोहे तो ऐसा लगे है कि

पूर्वजन्मको सूकर है। ठाकुरजी हँस पड़े। बोले तू कह तो रही है नाराज होकर, पर ठीक कह रही है, मैंने 'वराह' अवतार भी धारण किया था। ये ठाकुरजीका गो-प्रेम है।'

फिर ठाकुरजी कुछ और बड़े हो गये तो खेलते-खेलते गाय-बछड़ोंके पास चले जाते हैं। बछड़े भी उहकते हुए भगवान्के पास आ जाते हैं, सूँघते हैं और दिव्य सुगन्धवाले भगवान्के श्रीअंगको पाकर आनन्दमें आकर बछड़े उछल-कूदमें लग जाते हैं। जब बछड़े खड़े हो जाते हैं तो ठाकुरजी धीरे-धीरे उनके पैरके निकट जाते हैं और उनकी लम्बी लटकती हुई पूँछको पकड़ लेते हैं और पूँछको पकड़के खड़े हो जाते हैं, भगवान्के श्रीअंगका स्पर्श पाकर बछड़ोंमें बिजली-सी कौंध जाती है और वे बछड़े पूरी चौकड़ी भरने लग जाते हैं। ठाकुर बछड़ेके पीछे पूँछपर लटक रहे हैं और बछड़े भाग रहे हैं, इसको आचार्योंने कहा है—'लटकन्त ब्रह्म।' तो यह ठाकुरजीका गो-वत्स प्रेम है।

भगवान् श्रीकृष्णकी गोवंशके प्रति आत्मीयताका वर्णन करते हुए श्रीबिल्वमंगलजी महाराजने श्रीकृष्णकर्णामृत ग्रन्थमें कहा है—

गोपालाजिरकर्दमे विहरसे विप्राध्वरे लज्जसे
ब्रूषे गोधनहुंकृतैः स्तुतिशतैर्मौनं विधत्से विदाम्।
दास्यं गोकुलपुंश्चलीषु कुरुषे स्वाम्यं न दान्तात्मसु
ज्ञातं कृष्ण तवाङ्घ्रिपङ्कजयुगं प्रेमाचलं मञ्जुलम्॥

भाव यह है कि हे प्रभो! तुम ब्रजकी कीचमें तो विहार करते हो, पर ब्राह्मणोंके यज्ञमें पहुँचनेमें आपको लज्जा आती है। गायोंके हुँकार करनेपर, बछड़ोंके हुँकार करनेपर उनके हुँकारवाली भाषाको आप समझ लेते हो और बड़े-बड़े ज्ञानी स्तुति करने लग जाते हैं तो चुप खड़े रह जाते हो। उनको उत्तर नहीं देते और ये बछड़े जब हुँकार भरते हैं, बस तुरंत दौड़े हुए आप उनके पास चले जाते हो और उनको

गलेसे लगा लेते हो। हे कृष्ण! मैं जान गया आप और किसी तत्त्वका आदर नहीं करते, तुम तो केवल प्रेमका ही आदर करते हो, जिसके हृदयमें प्रेम है, उसीसे तुम रीझ जाते हो।

अब ठाकुरजीका गोप्रेम क्या है, इसे ध्यानसे सुनें। गो-रस-प्रेम गो-प्रेम है, गव्य पदार्थोंसे प्रीति ही गोप्रीति है। हम गायके प्रति तो प्रेम रखें, किंतु गव्य पदार्थोंसे हमारी प्रीति न हो? गव्य माने; दूध, दही, घी, गोमय, गोमूत्र। यदि हमारी गव्यसे प्रीति नहीं है तो गोसे प्रीति भी नहीं है। भगवान् श्रीकृष्णकी गव्य पदार्थोंमें प्रीति है। ठाकुरजीके घरमें दूध, दही, माखन-मिस्त्रीकी कमी नहीं, पर इसके बाद भी गव्य पदार्थोंसे उनकी जो प्रीति है, उस प्रीतिके कारण ठाकुरजी चोरी करके भी खाते हैं।

और ऐसी अद्भुत गोप्रीति है भगवान्‌की, अभी ठाकुरजी चार बरसके हुए और चार सालके ठाकुरजी रूठ गये, क्यों रूठ गये? बोले, 'बाबा! अब मैं बड़ो है गयो, मैं गैया चराऊँगौ। अरे लाला! ग्वारियाका लाला हैके गैया ही चरावेगौ और का करैगौ। एक पण्डितजी कथामें कहते थे, अरे ग्वारियाको छोरो हैके, गैया ही चरावेगौ का कलेक्टर बनैगौ?

लाला अभी तू नेक छोटो है, नेक बड़ो है जा, फेर गय्या चराइयो।' तब ठाकुरजी रोना बन्द नहीं कर रहे थे। यह निश्चित किया गया कि सखा-मण्डलीके साथ ठाकुरजीको गो-वत्सचारणके लिये नियुक्त किया जाय, चार सालके ठाकुरजी गैया चरानेके लिये, गोसेवाके लिये रो रहे हैं। ये ठाकुरजीकी गोप्रीति है।

वे बछड़े चराते हैं और बछड़े कैसे चराते हैं, उसका भी भागवतमें वर्णन है; बछड़ोंकी मालिश करते हैं, बछड़ोंके साथ खेलते-कूदते हैं, हरी-हरी घास उखाड़-उखाड़कर बछड़ोंको अपने हाथसे खिलाते हैं, बछड़े खूब घास चर लेते हैं, प्रसन्न हो जाते हैं, जमुनाजीका जल पी लेते हैं, बछड़े जब बैठ जाते हैं, तब ठाकुरजी बैठते हैं, इतनी प्रीति

करते हैं, कुछ कलेऊ लेकर आते हैं किंतु, बछड़े जब खा लें, पी लें तब ठाकुरजी कलेऊ करते हैं।

अब ठाकुरजी पाँच वर्षके पूरे हो गये और छठे वर्षमें प्रवेश किया। छः वर्षके भगवान् रोने लग गये और इतना रोये कि भगवान्का रोना ही बन्द न हो, खिलौने सामने रखे, तो सब उठाके फेंक दिये, गोदमें मैया लेती तो गोदसे उतरकर भूमिमें लोट जाते। सब शृंगार बिगाड़ लिया। अब मैया-बाबा सब पूछ रहे हैं, 'लाला कुछ बताय तो सही अपने मनकी तू क्यों रोय रह्यो है?' रोते-रोते हिचकी बँध गयी ठाकुरजीकी और बोले, 'बाबा! अब मैं माखन खाय-खाय मोटो है गयो हूँ, बड़ो है गयो हूँ, सो मैं गय्या चराऊँगौ।' अरे राम-राम! सवेरेसे गय्या चराइबे कूं रोय रह्यो है, पहले ही बताय देतो। देख लाला, हम गोपालक हैं, हमारो धर्म गो-सेवा है, हम गउअनकी सेवा करे हैं, पर हमारे हिन्दू धर्ममें समस्त कार्य मुहूर्त सूं किये जायँ। पुरोहितजीको बुलावेंगे, वे पंचांग देखेंगे, पत्रा देखेंगे, मुहूर्त बतायेंगे कि गोसेवाका, गोचारणका अमुक मुहूर्त है, तब तुम्हारे हाथ गोपूजनपूर्वक गोचारण सम्पन्न कराया जायगा।

ठाकुरजी बोले, बुलाओ पुरोहितजीको, अभी मुहूर्त दिखाओ। वे पुरोहितजी, पुरोहितजी रो रहे थे नाम लेके, तबतक शांडिल्यजी खुद ही आ गये। पुरोहितजीने पूछी कि 'लाला कैसे रोय रह्यो है? आप मुहूर्त देख दो, गैया कबसे चराना शुरू करें'।

तुरंत उन्होंने पंचांग खोला और बोले अरे बाबा, तुम्हारे लाला तो मुहूर्त देखके ही रोयो है। बोले आज कार्तिक शुक्ल अष्टमी है, गोपाष्टमी है, आज तो गोमाताका पूजन करके गोचारण करना चाहिये, आजसे श्रेष्ठ दूसरी कोई तिथि गोचारणकी नहीं है, तुम्हारौ लाला तो मुहूर्त देख के ही रोयो है। अब तो ठाकुरजीने प्रेमसे गोपूजन करके गोचारण प्रारम्भ किया। गोचारणके कालमें ही भगवान् पद-त्राण
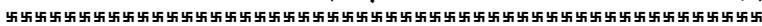
धारण नहीं करते, पैरमें जूता, चप्पल भगवान् धारण नहीं करते, इसलिये धारण नहीं करते कि 'हम गैया चरा रहे हैं'—इस सामान्य बुद्धिसे प्रभु क्रिया नहीं कर रहे हैं। गाय हमारी उपास्य देवता, इष्ट देवता हैं, यह गय्या चराना गो-उपासना है—यह मानकर भगवान् कर रहे हैं और उपासना जूता-चप्पल पहनकर नहीं की जाती, इसलिये भगवान् बिना पदत्राणके गोचारण करते हैं, गायोंके झुण्डके पीछे चलते हैं, क्यों चलते हैं गायोंके झुण्डके पीछे, इसलिये कि गोमाताकी चरणरज हमारे ऊपर पड़े और मैं पवित्र हो जाऊँ, तो क्या भगवान्में कोई अपवित्रता आ गयी है क्या? नहीं-नहीं भगवान्में कोई अपवित्रताकी सम्भावना नहीं है, पर वे परम पावन, पतित पावन श्रीकृष्ण भी गोचरणरजसे अभिषेकके पश्चात् निरतिशय पावनताका अनुभव अपने आपमें करते हैं, वनमाला, पोशाक, मुकुट-मुरली सब गोरजमयी हो जाती है।'

गाय खूब हरित-हरित घास चरके सन्तुष्ट हो करके जलपान करके जब बैठ जाती है तब ठाकुरजी बैठते हैं, तबतक ठाकुरजी खड़े ही रहते हैं, बैठते नहीं हैं। जब गाय बैठ जाती तब ठाकुरजी छाक आरोगते और गाय विश्राम करती तबतक ठाकुरजी खड़े हो जाते। कृष्णावतारमें जो अद्‌भुत गोभक्तिका आदर्श भगवान्‌ने प्रस्तुत किया है, वह तो अपने आपमें अनुपम है। श्रीकृष्णकी गोभक्ति श्रीकृष्णकी ही गोभक्ति है। वे गायोंके पीछे-पीछे जाते हैं और गायोंके पीछे-पीछे ही लौटते हैं, मुरली सुनाते हैं गायोंको। कालियनागका दमन करते हैं। कालियह्रदको शुद्ध करते हैं तो किसलिये? गायोंके लिये। कालिय-ह्रदका जल पान करके मृत्युको प्राप्त हुई गायोंको जीवनदान देते हैं। कहाँतक कहें, गायोंके लिये दावानलपान करते हैं, गायोंकी रक्षाके लिये ही बड़े-बड़े असुरोंका वध करते हैं; गायोंकी रक्षाके लिये ही गिरिराज गोवर्धनको अपनी कनिष्ठिकाके अग्रभागपर धारण करते हैं।

भगवान्से पूछा ब्रजवासियोंने, सखाओंने कि 'कन्हैया तू देख सांची-सांची बता हम सखानमें ते कोऊ तुम ते बड़ो है, कोऊ चार-छः महीने छोटो है हममें तो वो सामर्थ्य नहीं, तुममें इतनी सामर्थ्य कहाँसे आ गयी, जो तुमने गोवर्धन उठा लिया? तो ठाकुरजीने कहा, 'गो-सेवाके पुण्यसे हमने गोवर्धन उठा लिया।'

फिर भगवान् मथुरा जाते हैं, वहाँ कंस-वधके पश्चात् वसुदेवजी पूजन करवाते हैं। यज्ञोपवीत-संस्कार हुआ, तब गोदान हुआ फिर सांदीपनिजीके आश्रममें पढ़ने गये, तब गोसेवा करते थे और द्वारका-लीलामें तो स्पष्ट वर्णन है कि १३०८४ गायोंका दान प्रतिदिन द्वारकाधीश करते हैं, सींग स्वर्णमंडित, खुर रजतमंडित, पूँछमें मोती और जवाहरात पिरोये हुए सुन्दर रेशमी झूल। इतना गोदान नित्य करते तो स्वयं भगवान्के पास कितना गोवंश होगा? भगवान्की सम्पूर्ण ब्रज-लीलामें गाय ही प्रधान है। बृहत्पराशरस्मृतिमें लिखा है—

शृंगमूले स्थितो ब्रह्मा शृंगमध्ये तु केशवः।
शृंगाग्रे शंकरं विद्यात् त्रयो देवाः प्रतिष्ठिताः॥

गायके सींगके मूल भागमें ब्रह्माजी रहते हैं, मध्यमें भगवान् केशव और सींगके अग्रभागमें शंकरजी रहते हैं; तीनों देवता गोमातामें प्रतिष्ठित हैं।

गायसे भिन्न त्रिदेव नहीं हैं। आदिगऊ सुरभिसे इनका प्राकट्य कहा गया है। धर्मका जन्म गायसे है; क्योंकि धर्म जो है, वह वृषभ-रूप है और गायके पुत्रको ही वृषभ कहा जाता है। नील वृषभके रूपमें धर्म प्रकट हुआ है। अन्नकी प्रसूतिके लिये ही धर्मने धारण किया वृषभका रूप; क्योंकि बिना वृषभके खेती सम्भव नहीं है। उत्तम अन्न उसीसे उत्पन्न होता है। महापातकी जीव भी श्रद्धासे गोवंशकी सेवा करने लग जाय तो पापोंसे रहित हो जाता है और गोलोकमें जाकर वह सुशोभित होता है। गोसेवा करनेवालेको गोलोककी प्राप्ति होती है।

गायका स्मरण करके, गायको नमस्कार करके जो गायकी प्रदक्षिणा करता है, उसने मानो सात द्वीप और सात समुद्रवाली पृथ्वीकी प्रदक्षिणा कर ली। जो गायको केवल चारा डाल दे, जल पिला दे अथवा नित्य ग्रास अर्पित करे तो वह सौ अश्वमेधके समान पुण्य प्राप्त करता है—

संस्पृशन् गां नमस्कृत्य कुर्यात् ताञ्च प्रदक्षिणम्॥
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
तृणोदकादिसंयुक्तं यः प्रदद्यात् गवाह्निकम्।
सोऽश्वमेधसमं पुण्यं लभते नात्र शंसयः।
गवां कण्डूयनं स्नानं गवां दानसमं भवेत्॥

(बृहत्पराशरस्मृति)

गायकी पीठपर हाथ फेर दिया, बढ़ियासे उसको खुजोरा कर दिया, उसको मक्खी–मच्छरसे बचानेके लिये आपने गोशालामें धुआँ कर दिया तो नित्य ऐसा करनेवालेको नित्य कपिला गायके दानका पुण्य प्राप्त होता है। गोदान करनेवाला तो जीवनमें कुछ ही दान करेगा, लेकिन निष्काम भावसे गोसेवा करनेवाला तो नित्य गोदानका पुण्य पाता है।

महर्षि पाराशर कह रहे हैं अपने शिष्य सुव्रतसे—हे वत्स सुव्रत! उसको पाप कहाँसे स्पर्श कर सकता है, उसके घरमें कहाँसे अमंगल हो सकता है, जहाँ गाय प्रसन्न होकर निवास करती हो, बछड़ों और बछियोंके साथ उस घरमें कभी अशुभ–अमंगल होता ही नहीं, जहाँ गाय परिवारके सदस्यकी तरह निवास करे।

महर्षि पाराशर कह रहे हैं कि ब्रह्माजीने एक ही कुलके दो भाग कर दिये—एक भाग गाय और एक भाग ब्राह्मण, इसलिये गाय और ब्राह्मण दोनोंकी एक ही श्रेणी है; क्योंकि ब्राह्मणमें मन्त्र प्रतिष्ठित हैं और गायोंमें हविष्य प्रतिष्ठित है।

गोभिर्यज्ञाः प्रवर्तन्ते गोभिर्वेदा प्रवर्धिताः।
गोभिर्वेदा समुद्गीर्णा सषडङ्गपदक्रमाः॥

गायोंमें ही सारे यज्ञोंकी प्रतिष्ठा है, गाय नहीं रहेगी तो सृष्टि भी नहीं रहेगी; इसलिये गायके बिना सृष्टिकी कल्पना नहीं की जा सकती। वेदोंकी स्थिति भी गायमें ही है। छः अंगोंके सहित वेदकी उत्पत्ति गायसे ही है, ऐसा पुराणोंमें लिखा है।

जो नास्तिक प्रकृतिके प्राणी हैं, वे गायके महत्त्वको सुन करके अर्थवाद-बुद्धिकी कल्पना कर लेते हैं। अर्थवाद माने गाय उपयोगी पशु है, इसलिये बढ़ा-चढ़ाकर महिमा कह दी गयी है, वास्तवमें इतनी महिमा है नहीं—ऐसा सोचनेवाले आज भी ऐसे तमाम लोग हैं, जो गायको कुछ भी नहीं मानते। नास्तिक शब्दका अर्थ क्या है—'**नास्तिको वेदनिन्दकः।**' वेदोंका मूल गाय है; क्योंकि हविष्यका आधार भी गाय है और मन्त्रका आधार भी गाय है, इसलिये जो वेदको नहीं मानते, वे गायको नहीं मानते, जिनके सिद्धान्तमें परलोक नहीं है, पुनर्जन्म नहीं है, वेदकी महिमा नहीं है; गायके प्रति विश्वास, निष्ठा और प्रीति नहीं है, वे ही नास्तिक हैं।

हमें एक बात स्मरण आती है अपने पूज्य धर्मसंघवाले गुरुजीकी। गुरुजीके पास पढ़ने जाते थे तो एक बार गुरुजीसे हमने पूछा—गुरुजी! सनातनधर्मी हिन्दूकी कोई सरल परिभाषा बताइये। गुरुजी हँसने लगे, बोले—जो परलोक-पुनर्जन्म न माने वह नास्तिक है और परलोक-पुनर्जन्मको माने, वह हिन्दू है। यदि ऐसी परिभाषा की जाय तो ऐसे भी सम्प्रदाय हैं जो पुनर्जन्म एवं परलोकको मानते हैं, पर वेदको नहीं मानते, वे भी हिन्दू हो जायँगे—यह ठीक नहीं है। इसलिये गुरुजी पुनः बोले—'हिन्दू' शब्दका सरलार्थ यह है कि जिसकी गायमें श्रद्धा हो, गोबर-गोमूत्रमें श्रद्धा हो, वह हिन्दू है। गायके गोबर और गोमूत्रमें जिसको घृणाबुद्धि आये तो कहीं-न-कहीं वर्णसंकरताका दोष, दूषित

रक्त उसमें आ गया है—ऐसा समझना चाहिये। इसलिये उसकी गायमें और गव्य-पदार्थोंमें श्रद्धा नहीं होती। गायका गोबर और गोमूत्र तो ऐसा होता है कि बुद्धि अपने-आप सात्त्विक हो जाती है। गायके गोबरसे लिपा हुआ घर हो, झोपड़ी हो, उसमें रहकर जो आनन्द आता है, बढ़िया रंग-रोगन चढ़ा हो, उस घरको देखकर वैसा आनन्द नहीं आता।

गायके गोबरसे लिपा-पुता घर देखकर चित्तमें अपने-आप सात्त्विकता आ जाती है। आप सोचिये, जिस गायके गोबर और गोमूत्रमें इतना सत्त्वगुण है, उससे लिपे हुए घरको देखकर हृदयमें सात्त्विक भाव उठने लग जाय तो कल्पना कीजिये कि गायके रोम-रोममें कैसी सात्त्विकता होगी! गायके शरीरसे एक विशिष्ट प्रकारकी सात्त्विकता प्रकट होती है। मनुष्य जो स्वाभाविक श्वास लेता है, उसके अनुसार २४ घण्टेमें २१,६०० श्वास होता है और १ मिनटमें १५ श्वास लेता है, किंतु गाय ११ श्वास या १० से कम श्वास लेती है। मनुष्य जब विकारग्रस्त (क्रोधादियुक्त) होता है तो प्रतिमिनट १५ से भी कई गुना अधिक श्वास लेने लग जाता है। अतः गायोंको निकट रखना चाहिये और गायोंके बीचमें रहना चाहिये; क्योंकि उससे विकार अपने-आप कम होते चले जायँगे। गायोंके निकट कुत्ता, बिल्लीको बिलकुल भी नहीं रखना चाहिये। कुत्ता और बिल्लीकी श्वासकी प्रक्रिया बहुत तेज होती है, इसलिये इनके शरीरमें तमोगुणके परमाणु प्रकट होते हैं और इनके निकट रहनेवाले लोगोंमें भी विकार बढ़ जाते हैं। गीताप्रेसके 'गो-अंक' (कल्याण)-में तो लिखा है कि गौशालाओंमें कुत्ता नहीं रहना चाहिये; क्योंकि गोवंश अस्वस्थ हो जायगा, गायका दूध कम हो जायगा, गायोंमें रोग उत्पन्न हो जायगा। योगसिद्ध कोई होना चाहता है तो गायोंके बीच रहकर यदि वह योगाभ्यास करे तो उसे योगसिद्धि शीघ्रातिशीघ्र होगी, उसे अपने मन और इन्द्रियोंपर

विजय प्राप्त करनेमें बहुत सुगमता होगी।

गाय अपने-आपमें स्वराट् है। गायको सुशोभित करनेके लिये किसीकी आवश्यकता नहीं। स्वयं अपने-आपमें उसकी शोभा है। वस्तुतः गाय देखनेमें ही कितनी अच्छी लगती है, गाय प्रसन्नतासे बैठी हो, जुगाली कर रही हो, आप शान्तिसे गायपर त्राटक (बिना पलक झपकाये निरन्तर देखते रहनेकी क्रिया) कीजिये, अपने-आप आपके चित्तमें बड़ी प्रसन्नता होगी। गाय बहुत शान्ति और आनन्दमें रहनेवाली प्राणी है। इनका कुल अपने-आप तो सुशोभित होनेवाला है ही, गायोंसे ब्रजकी और ब्रजबिहारी श्रीकृष्णकी शोभा है, ऐसी गोमाता है।

आर्थिक समृद्धिका आधार गाय है। बिना गायके आर्थिक समृद्धि सम्भव नहीं है। जो गोसेवक है, वह स्वराट् हो जाता है। गायके गव्य पदार्थोंसे प्रभूत सम्पत्तिकी उसे प्राप्ति होती है, वह गायके द्वारा उत्तम अन्न (खेती आदि) प्राप्त करता है। जो गायकी सेवा करता है, उसको श्रीकृष्णको प्राप्त करनेका भाव उत्पन्न हो जाता है। कहते हैं इसका कोई प्रमाण है क्या? बोले—हाँ, प्रमाण है, आदिपुराणमें भगवान् वेदव्यास कह रहे हैं, नित्य गोसेवा करनेवालेको श्रीकृष्णकी प्राप्ति हो जाती है—

'श्रीकृष्णः प्राप्यते विप्र नित्यं गोकुलसेवया।'

वेद-शास्त्रोंमें गायकी महिमा तो कम है, इससे भी अनन्तगुणा गायकी महिमा है, लेकिन पामर (नीच) मनुष्य गायको पशु मानते हैं। जो गायकी सेवा करते हैं, वे दरिद्र नहीं रहते।

हमने अपने बाल्यकालमें बड़े-बड़े लोगोंसे सुना है कि कोई जमाना ऐसा था, जब लड़का देखनेके लिये—घर-वर देखनेके लिये नाई और पुरोहितजी आते थे तो नाईको पुरोहितजीकी सेवाके लिये भेजा जाता था और परिवारका एकाध सदस्य भी साथ हो जाता था। नाईको सिखाकर रखा जाता था कि हम लोग तो इधर बातचीत करेंगे,

तुम जाकर उनकी गोशाला देखकर आना, गोशालामें खूँटे गिन करके आना कि कितने खूँटे गड़े हैं, वह आकर धीरेसे बता देता था कि इतने खूँटे गड़े हैं। जब पता चला कि ४० खूँटे गड़े हैं, तब तो बोले—आँख मूँदकर बेटी दे दो इनके यहाँ, कोई चिन्ता नहीं। बिटिया और बच्चे खूब पुष्ट और आनन्दमें रहेंगे। ४० गैया हैं, दूध तो खूब होगा, तो उस समय लोग क्या करते—जैसे किसीके यहाँ २५ गायें हैं तो वे १० खूँटे और गाड़के रखते और उनमें रस्सी बाँधके रखते; क्योंकि जब नाई खूँटे गिनने जाय तो उसे संख्या कम न समझ आये। अधिक खूँटे होंगे तो ब्याह जल्दी हो जायगा। बड़े लोग कहते थे—ऐसी स्थिति हमने अपने जीवनमें देखी है कि जिनके यहाँ गोवंश नहीं होता था, उनके लड़केका विवाह नहीं होता था, भले ही वे सम्पन्न हों।

पहले समयमें गायसे ही सम्पत्ति आँकी जाती थी। कौन कितना धनाढ्य है, इसका अनुमान गायसे ही होता था। राजाओंकी समृद्धि भी गायसे देखी जाती थी। जिस राजाके पास जितना अधिक गोवंश होता था, वह उतना ही अधिक बड़ा राजा माना जाता था। ब्रजमें नन्दबाबासे भी बड़े वृषभानुजी माने जाते थे—राधारानीके पिताजी; क्योंकि उनके पास दो लाख गायें नन्दबाबासे ज्यादा थीं। गर्गसंहिता (गोलोकखण्ड)-में किसीके पास गायोंकी संख्याके आधारपर उसे विभिन्न पदवियोंसे सम्मानित करनेका वर्णन इस प्रकार उपलब्ध है—

वृषभानु—जो १० लाख गायोंको पालता हो।

नन्द—जो ९ लाख गायोंको पालता हो।

उपनन्द—जो ५ लाख गायोंको पालता हो।

और भले ही चाहे व्यक्ति जितना सुखी-सम्पन्न हो, एक भी गाय जिस व्यक्तिके पास नहीं है, उसके जैसा दरिद्र दुनियामें कोई दूसरा नहीं है। इसलिये आप यदि दरिद्रतासे बचना चाहते हैं तो गाय पालें। हरेक व्यक्ति एक गाय घरमें कम-से-कम पाले। जिनको भगवान्‌ने

गाँव, देहातमें जन्म दिया है, जिनके पास पर्याप्त जगह है, वे तो अवश्य ही गाय रखें, जिनको भगवान्‌ने ४-६ बीघा खेत दिया है, वे भी अवश्य गाय रखें। इतना ही नहीं; जो बहुत बड़े शहरोंमें रहते हैं, कई-कई मंजिलके फ्लैट बने होते हैं, उनमें रहते हैं, वहाँ वे बेचारे गाय नहीं रख पाते। तो जहाँ रहते हैं वहाँसे २०-२५ किलोमीटर दूर जाकर अपनी फैक्ट्री, कारखाना, उद्योग लगाते हैं तो उन लोगोंका भी कर्तव्य है कि अपनी समान विचारधारावाले लोगोंके साथ बैठकर एक ट्रस्ट गठित कर लें और शहरोंसे दूर क्षेत्रमें, जहाँ विशाल भू-खण्डकी उपलब्धि हो सके, वहाँ सुन्दर भारतीय देशी नस्लकी गायोंको रखें और सब लोग मिल-जुल करके उनका पालन-पोषण करें और यह निश्चय करें कि हमारे घरमें कोई उत्सव होगा तो वह उत्सव हम गौशालामें ही जाकर मनायेंगे। बच्चेका जन्म-दिन है तो उस दिन गायकी भिक्षा होगी, गौशालामें जाकर ग्वालोंका सत्कार किया जायगा, गोपूजन किया जायगा। चाहे जन्म-दिन हो, विवाह हो, मृत्यु हो, हर उत्सवको गौशाला और गौमातासे जोड़ दें तो इस तरहसे बार-बार जब वे अपने परिवारके साथ गौशालाओंमें जायेंगे तो उनमें उत्तम संस्कार पैदा होंगे, अब तो लोग बच्चेका जन्म-दिन है तो होटलमें जाते हैं; राम-राम, वहाँ जानेसे कोई संस्कार जगेंगे?

खाक-चौक (वृन्दावनमें एक स्थल है)-में महाराजजीके स्थानमें तो हमेशा ही गायें रहती थीं। १०-१५ गायें तो हमेशा रहती थीं। स्थान गायोंसे भरा रहता था। छोटी जगह थी, १०-१५ गायोंमें ही स्थान भर जाता था। एक बारकी बात है, बम्बईके कुछ लोग यहाँ आये, उसी समय गायें बाहरसे घूमकर आयीं, गायोंने अन्दर प्रवेश किया तो उनके छोटे बच्चे गायको देखकर ऐसे चिल्लाये, ज्यादा छोटे बच्चे नहीं ८-१० सालके थे, जैसे कोई सिंह आ गया हो। वे भागे और मन्दिरमें घुस गये। वहाँसे रोने-चिल्लाने लगे। यह देखकर महाराजजीको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बोले—गायोंको देखकर ये इतना क्यों डर रहे
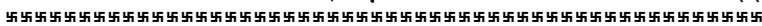
हैं? गायें तो आगे बढ़ गयीं, किंतु उन बच्चोंको तो बड़ी मुश्किलसे बाहर लाया गया। महाराजजी बोले—देखो, इनका दुर्भाग्य है, इन्होंने भारतवर्षमें जन्म लिया है और गायसे डरते हैं। तब उनके परिवारवालोंने बताया—महाराजजी! क्या बतायें, बम्बईमें कहाँ गाय? इन्होंने गाय देखी ही पहली बार है, तो डर तो लगेगा ही।

इसलिये यह अच्छा है कि बड़े शहरोंमें रहनेवाले समान विचारवाले लोग, जितना उनसे हो सके भू-खण्ड खरीदकर गौशाला खोलें। बहुत-सी गौशालाओंमें हमने देखा है कि कमेटी तो बड़ी-बड़ी बन जाती है, पर वे कमेटीवाले एक बार भी महीनेमें आकर गायकी खोज-खबर लेना अपना कर्तव्य नहीं समझते, ऐसी कमेटीसे क्या प्रयोजन, तो लोग जाकर वहाँ गायके मुखको देखें, गायका दर्शन करें, गायकी पीठपर हाथ फेरें और वे जितने गायसे जुड़े हुए लोग हैं, वे प्रतिज्ञा करें कि हम गायके ही दूध-दहीका सेवन करेंगे, गायके दूधसे बनी मिठाइयोंका ही अपने उत्सवोंमें प्रयोग करेंगे। ऐसा निश्चय करेंगे तो बहुत बड़ा लाभ हो जायगा, बहुत बड़े अंशमें गोरक्षा हो जायगी। बड़े उद्योगपति वैज्ञानिक पद्धतिसे गायकी सेवा करें, धार्मिक भावनाके साथ ही आर्थिक भावना उनमें हो तो भी कोई हर्ज नहीं है। हमारा अर्थशास्त्र कहता है कि गायसे बहुत बड़ी मात्रामें समृद्धिकी सम्भावना है। यह इतना अच्छा कार्य है कि इसमें घाटेका तो कोई काम है ही नहीं। ठीकसे किया जाय जो कोई प्रतिबन्ध नहीं है। कई कम्पनियाँ तो दूधसे बहुत बड़ी मात्रामें मुनाफा कमा रही हैं। उन्हें दूध दें। चरकसंहिता (सूत्र० २७। २१७)-में गायके दूधके दस गुणोंका वर्णन इस प्रकार किया गया है—

स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छिलम्।
गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः॥

अर्थात् गायका दूध स्वादिष्ट, शीतल, कोमल, चिकना, गाढ़ा, श्लक्ष्ण, लसदार, भारी और बाह्य प्रभावको विलम्बसे ग्रहण करनेवाला

तथा मनको प्रसन्न करनेवाला होता है। देशी गायका तो गोबर भी उपयोगी है, मूत्र भी उपयोगी है। हर वस्तु उनकी उपयोगी है। देशी गायके दूधकी महिमाका वर्णन किया जाय, ठीकसे समाजमें उसको प्रचारित-प्रसारित किया जाय।

इस प्रकार गायको हम अपने हृदयमें बसा लें तो वह दिन दूर नहीं, जब गोवंशके वधका कलंक इस देशसे सर्वदाके लिये मिट जायगा। हम गायोंके बीचमें ही रहें। गाय मनुष्यकी सम्पूर्ण दरिद्रताको नष्ट कर देती है। अपनी सेवाके द्वारा वह अपने आश्रितके अर्थात् गोसेवकके सम्पूर्ण अज्ञान-अविद्याको दूर कर देती है। गाय माता है, गाय ही महान् तीर्थ है, गाय सारी अपावनताको दूर कर देती है। वह लक्ष्मीरूप है, इसलिये सारी दरिद्रताको दूर कर देती है। गाय सर्वतीर्थमयी है। सम्पूर्ण समृद्धि, श्री, लक्ष्मी गायके रूपमें ही सुरक्षित है। महाभारत अनुशासनपर्वमें गौकी महिमाके सम्बन्धमें कहा गया है—

गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत॥
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च।
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः॥

× × ×

गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम्॥

महर्षि च्यवनने राजा नहुषसे कहा—अपनी मर्यादासे कभी च्युत न होनेवाले हे राजेन्द्र! मैं इस संसारमें गौओंके समान कोई धन नहीं

देखता हूँ। वीर भूपाल! गौओंके नाम और गुणोंका कीर्तन तथा श्रवण करना, गौओंका दान देना और उनका दर्शन करना—इनकी शास्त्रोंमें बड़ी प्रशंसा की गयी है। ये सब कार्य सम्पूर्ण पापोंको दूर करनेवाले और परम कल्याणकी प्राप्ति करानेवाले हैं। गौएँ सदा लक्ष्मीकी जड़ हैं। उनमें पापका लेशमात्र भी नहीं है। गौएँ ही मनुष्योंको सर्वदा अन्न और हविष्य देनेवाली हैं। स्वाहा और वषट्कार सदा गौओंमें ही प्रतिष्ठित रहते हैं। गौएँ ही सदा यज्ञका संचालन करनेवाली तथा उसका मुख हैं। वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करनेवाली और दुहनेपर अमृत ही देती हैं। वे अमृतकी आधारभूत हैं, सारा संसार उनके सामने नतमस्तक होता है। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, गौएँ स्वर्गमें भी पूजी जाती हैं, गौएँ समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं, उनसे बढ़कर कोई दूसरा नहीं है।

स्मृतियोंमें लिखा है कि सात समुद्र और सप्तद्वीपवाली जो पृथ्वी है, उसपर जितने तीर्थ हैं—उन तीर्थोंका माहात्म्य गायके श्रृंगके अग्रभागसे स्पृष्ट जो जल है, उसके माहात्म्यका सोलहवाँ अंश भी नहीं है। गायके श्रृंगका कुशोदकसे प्रक्षालन करके जल इकट्ठा करना श्रृंगोदक कहलाता है। स्मृतियोंमें लिखा है कि गाय स्पर्शसे सम्पूर्ण पापोंको नष्ट कर देती है—'**स्पृष्टाश्च गावः शमयन्ति पापम्।**' जो गायको स्नेहपूर्वक स्पर्श करते हैं, उनके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और जो गायोंकी श्रद्धापूर्वक सेवा करते हैं, वे लक्ष्मीवान् हो जाते हैं। धनाढ्य हो जाते हैं, श्रीमान् हो जाते हैं।

एक बात है, जो बड़े विनोदकी है, पर है अनुभवकी। हमने तो साधुओंमें यह देखा कि जिसने गायका गोबर उठाया, वह महन्त बन गया। कई उदाहरण हमने ऐसे देखे हैं। अब महन्तोंका नाम लेंगे तो उनको बुरा लगेगा कि देखो, महाराज मंचसे हमको गोबर उठानेवाला कह रहे हैं, यद्यपि इसको सुनकर उनको अपने-आपमें गौरवका अनुभव करना चाहिये। हमारे सामनेके १०-२० उदाहरण ऐसे हैं, जो

गौका गोबर उठाते थे, अब बड़े-बड़े स्थानोंके महन्त बन गये हैं। यद्यपि महन्त बनना कोई बड़ी उपलब्धि नहीं है तथापि गोसेवाकी महिमाकी दृष्टिसे यहाँ यह एक सामान्य दृष्टान्त प्रस्तुत है—

श्रीअयोध्याजीमें बड़ी छावनी एक स्थान है, यहाँ एक महन्त ऐसे हुए श्रीकौशलकिशोरदासजी महाराज, जो बहुत प्रतापी सन्त थे। उनके जमानेमें ढाई हजार गायें थीं, बहुत लम्बी-चौड़ी खेती थी। उनके समयमें गोसेवा, सन्तसेवा बड़ी अद्भुत हुई।

उनके जो गुरुदेव थे, वे शिष्यको महन्त बनाना चाह रहे थे। जिनको महन्त बनाना था, उस दिन वे उबटन लगाकर बढ़ियासे स्नान कर रहे थे। बढ़ियासे स्नान करके तिलक लगाकर अँचला पहनकर आनेकी तैयारीमें ही लगे थे। जब समय अधिक हो गया तो गुरुजीने कहा, भाई! क्या बात है, देर हो रही है, मुहूर्त निकला जा रहा है, पूजन भी होना है। सब लोग आ गये। महन्त जिसको बनाना है, वह कहाँ है? बुलाओ उसको, किसीने कहा—वे तो तैयार हो रहे हैं। अरे! राम-राम-राम! अभी तो महन्त बना नहीं, अभीसे सजावटमें लग गया तो फिर महन्त बननेपर तो अपनी ही सजावट करेगा; गोसेवा, ठाकुरसेवा और सन्तसेवा तो करेगा नहीं, तो बोले कि ठीक है उसको सजावट करने दो, उसको बुलाने मत जाना और खुद उठे वहाँसे और उठकर घूमने लगे तो उन्होंने देखा कि बाजे बज रहे थे, महन्त बननेके लिये बड़ा भारी उत्सवका माहौल था, पर एक बालक, जिसकी आयु १०-१२ वर्षकी रही होगी, गोशालामें गोबर उठा रहा था, उसे उत्सवसे कोई मतलब ही नहीं था, वह गोसेवामें लगा था। हाथ गोबरसे सने हुए थे। उसे देखकर गुरुजी बड़े खुश हो गये और बोले—'गोसेवा करता है, गोबर उठाता है, महन्त बननेलायक तो यही है।' विप्र बालक था ही, तुरन्त उसका हाथ पकड़ा, बोले—चल-चल। बोला—कहाँ गुरुजी? कहा—चल तुझे गद्दीपर बिठाना है। वह बोला—गुरुजी! हम तो बालक हैं। बोले—बालक नहीं, तुम गोसेवक

हो। तुमको गद्दीपर बिठायेंगे, चलो, उसने कहा—हाथ-पैर धो आयें। तो बोले—नहीं, हाथ-पैर धो लोगे तो पवित्रता नष्ट हो जायगी। अभी तुम्हारे पैरमें गोबर लगा है, हाथमें गोबर लगा है। इस समय महन्त बनोगे तो खूब गोसेवा करोगे, फिर मुहूर्त निकल जायगा, गोबरसे सने हुए हाथोंसे ही तुरन्त ले जाकर स्वस्तिवाचन करके उसे महन्त बना दिया। ये बालक ही कौशलकिशोरदासजीके रूपमें विख्यात हुए। तो जिनके हाथ गोबरसे सने हुए थे, वे कौशलकिशोरजी जब गद्दीपर बैठे तो इतनी गोसेवा और सन्तसेवाका विस्तार हुआ कि सर्वत्र आनन्द छा गया। वे महान् उदार, दानी और परोपकारी थे, गोसेवाके प्रभावसे अपार समृद्धि और सम्पत्ति उनके पास थी तो गाय अपनी सेवा करनेवालेकी दरिद्रताको दूर कर देती है। इसलिये यह निवेदन है कि जिसे महान् बननेकी इच्छा हो, धनाढ्य बननेकी इच्छा हो, सच्चे अर्थमें श्रीमान् बननेकी इच्छा हो तो उसको गौका गोबर उठाना चाहिये।

श्रद्धापूर्वक सेवा करनेवालेको गाय अपरिमित सम्पत्ति प्रदान करती है और गायकी यदि कृपाभरी दृष्टि जीवको प्राप्त हो जाय तो वह निश्चित ही उत्तम गतिको प्राप्त होता है। स्मृतियोंमें लिखा है—गायकी समता करनेवाला धन इस ब्रह्माण्डमें दूसरा कोई नहीं है। गोधन सर्वश्रेष्ठ धन है, इससे बढ़कर धन कोई नहीं है। सम्पूर्ण देवता इसमें निवास करते हैं। आप विचार कीजिये, जिसके गोबरमें लक्ष्मी हो, जिसके मूत्रमें साक्षात् भगवती गंगा हो, उसकी महिमाका क्या कहना! उसकी तो अनन्त अपरिमित महिमा है। गाय सर्वदेवमयी है और सर्ववेदमयी है—यह वराहपुराणमें लिखा है। इसलिये विद्याकी प्राप्ति भी गायकी सेवासे और देवताओंकी कृपा भी गायकी सेवासे प्राप्त हो जायगी। भगवान् वाराह कह रहे हैं—हे पृथ्वीदेवि! अमृतको धारण करनेवाली यह गाय तीनों लोकोंका मंगल करती हुई विचरण कर रही है। तीर्थोंमें भी यह महान् तीर्थ है, इससे बड़ा कोई दूसरा तीर्थ नहीं है। पवित्रोंमें भी यह पवित्र है, पुष्टियोंमें भी यह श्रेष्ठ पुष्टि है।

गाय दहीसे देवताओंको प्रसन्न करती है, शंकरजीको दूधसे प्रसन्न करती है। इसलिये शंकरजीका दुग्धाभिषेक रोज हो तो बहुत सुन्दर है। गोशालाओंमें शंकरजीका नित्य गायके दूधसे अभिषेक होना चाहिये। व्रजमें तो शंकरजी स्थापित हैं और गिरिराज महाराज स्थापित हैं, उनका नित्य गोदुग्धसे अभिषेक होता है।

अयोध्यामें हनुमानगढ़ीकी गोशालामें नियम है—वहाँ हनुमान्‌जीका तीन समय स्नान होता है, पाँच-पाँच किलो दूधसे—पाँच किलो सबेरे, पाँच किलो सन्ध्याको और पाँच किलो गोदुग्धसे दोपहरको—पन्द्रह किलो गोदुग्धसे स्नान होता है। केवल हनुमान्‌जीकी सेवाके लिये उस दूधका उपयोग होता है। बछड़ा-बछिया पीते हैं, ग्वाले पीते हैं और किसीको नहीं मिलता।

शंकरजीको दूध चढ़ाना चाहिये। आज भी गाँवोंमें ऐसा है कि गैया जब बछड़ा-बछिया देती है तो दसवें-ग्यारहवें दिन लोग गौका कच्चा दूध शंकरजीको चढ़ाने जाते हैं। गाय अपने घीसे अग्निको तृप्त करती है, खीरसे ब्रह्माजीको प्रसन्न करती है और माखनसे श्रीकृष्णभगवान्‌को प्रसन्न करती है। पंचगव्यका पान करनेसे मनुष्यके सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं—ऐसा वराहपुराणमें लिखा हुआ है।

ब्राह्मणका कर्तव्य है कि जो गाय दानमें आ गयी है, उसको मूल्यसे किसीको बेचे नहीं। दानमें मिली हुई गायका दान किया जा सकता है, लेकिन मूल्य लेकर कोई बेचता है तो उसे नरकमें जाना पड़ेगा। हमारे महाराजजी कहते थे कि गाय अमूल्य है, उसके माहात्म्यको नहीं कहा जा सकता है।

एक बार महाराजजीसे ऐसे ही चर्चा हुई तो उनसे पूछा गया कि महाराजजी! मान लो गायकी सेवाकी सामर्थ्य नहीं है और कर्ज हो जाय तो? बोले—भाई! गाय भूखी थोड़े ही रहेगी, कर्ज करके भी गायको खिलाना ही चाहिये। तो महाराज! कर्ज करके मरना पड़ेगा तो फिर लौटकर आना पड़ेगा। तो बोले—अरे! ऐसे कौन-से पवित्र

कर्म कर रहे हैं कि लौटकर दुबारा न आना पड़े। दुनियाका खाकर दुनियाका कर्ज चुकाने आना पड़े, इससे तो अच्छा है गायका कर्ज चुकाने आयेंगे तो कम-से-कम गोसेवा तो करेंगे। इसलिये गाय भूखी न रहे, अपनी शक्ति-सामर्थ्यसे भी अधिक गायकी सेवा करनी चाहिये।

कल्याणकारी जितने साधन हैं, उनमें 'श्रवण'-भक्ति अत्यन्त अपेक्षित है। श्रवणके बिना साधन दोषपूर्ण हो जायगा। जैसे एक उद्धरण दें कि भगवत्प्राप्तिका एक श्रेष्ठ साधन है, बहुत श्रेष्ठ साधन है—गोसेवा। कोई दूसरे साधनकी जरूरत नहीं। गोसेवा करें और जीवनका कल्याण हो जायगा, भगवत्प्राप्ति हो जायगी। ऐसा हमारे शास्त्रोंमें प्रतिज्ञापूर्वक कहा गया है, किंतु गोसेवा करनेवाला भी यदि भगवच्चरित्र नहीं सुनता है, सत्संग नहीं करता है तो गायके प्रति भगवद्बुद्धिका उदय नहीं हो पायेगा और जबतक गायमें भगवद्बुद्धिका उदय नहीं होगा तबतक गायके प्रति पशुबुद्धि बनी रहेगी। तबतक गोसेवा करनेमें भी अपराध बनते रहेंगे। श्रवणसे यह बात समझमें आ जायगी कि गाय पशु नहीं है, आकार भले ही पशुका हो, किंतु यह साक्षात् भगवत्स्वरूप है और भगवद्-रूप मान करके जब हम उसकी सेवा करेंगे तो हमारी सेवामें दोष नहीं रहेगा, त्रुटि नहीं रहेगी, फिर साधन रुचिपूर्वक बनने लग जायगा।

कितने दुःखकी बात है विश्वगुरु, सारे विश्वको प्रकाशकी किरण देनेवाला भारत, जिसके सम्बन्धमें श्रीजयशंकरप्रसादजीने कहा है—***'जगे हम लगे जगाने विश्व लोक में फिर फैला आलोक'*** सबसे पहले हम जगे, फिर हमने विश्वको जगाया। आज वही देश, धर्मप्राण देश, मांस-विक्रेताओंमें पहले नम्बरपर है। गोमांस बेचनेवालोंमें भारत प्रथम स्थानपर है।

हमारे धर्मग्रन्थोंमें कहा गया है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।

प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय
मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

[ऋग्वेद ८।१०१।१५]

अर्थात् गाय रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, अदितिपुत्रोंकी बहन और घृतरूप अमृतका खजाना है। अतः प्रत्येक विचारशील पुरुषको मैंने यही समझाकर कहा है कि निरपराध एवं अवध्य गौका वध न करो।

ये बातें जब याद आती हैं तो लगता है हमको जीवित रहनेका अधिकार नहीं है। जो भारतवर्षकी पवित्र धरती गायके गोबर और गोमूत्रसे सिंचित हुआ करती थी, आज निरीह, निरपराध, विश्वहितकारिणी, विश्वमंगलकारिणी गायके रक्तसे रंजित हो रही है। ५० से ६० हजारतक गोवंश सूर्योदय होते-होते कट जाता है और ये शासक गोमांस विक्रय करके भारतकी गरीबी दूर करना चाहते हैं, भारतको समृद्ध बनाना चाहते हैं! यजुर्वेदमें गायको 'अघ्न्या' अर्थात् सर्वथा अवध्य कहा गया है।

हमारे पूज्य गुरुदेव श्रीभक्तमालीजी महाराज कहा करते थे कि जब हम वाराणसीमें संस्कृत महाविद्यालयमें पढ़ते थे, उस समय स्वतन्त्रता-आन्दोलन अपने जोरोंपर था, तो महात्मा गाँधीजीने काशीकी सभाओंमें कहा—'जिस दिन देश स्वतन्त्र होगा, कलमकी पहली नोकसे गोवधपर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया जायगा' किंतु आज स्वतन्त्रताके बाद ६० वर्षसे भी अधिक समय व्यतीत हो गया है, गोवध बन्द होनेकी तो कौन कहे, वह और अधिक चरमसीमापर पहुँचता जा रहा है।

आज भारतका गोधन लगभग ७५ प्रतिशत नष्ट हो चुका है, केवल २५ प्रतिशत बचा है। कोई समय आयेगा कि लोग चित्र बनाना भूल जायँगे कि गायका चित्र कैसा होता है। होगा नहीं, ऐसा हो गया। कई-कई जगह बच्चे नहीं पहचानते कि भारतीय गाय कैसी होती है। वे सबको गाय ही समझते हैं। एक मन्दिरके उत्सवकी बात थी। गिरिराजधरणका मन्दिर था। वहाँ दीवालपर गायोंका चित्र बनाया गया

था। जिनका चित्र बनाया गया था—न किसीके गलकम्बल, न किसीके ककुद्। वहाँके आयोजक कह रहे थे—देखिये, कैसा बढ़िया, क्या सजीव चित्रकारी की है। हमने कहा, चित्रकारी तो बहुत अच्छी की है, पर गायका चित्र इसमें नहीं है। अरे! आप कैसे कह रहे हैं गायका चित्र नहीं है? उस लड़केको बुलाया गया, जिसने चित्र बनाया था तो उसने घीके पीपेपर जो जर्सी गायके चित्र बने थे, वे दिखाये और कहा—देखो, ऐसी तो होती है गाय। हमने कहा—अरे! यह दूध नहीं, यह तो सफेद पानी तैयार करनेवाला एक संयन्त्र है, यह गाय नहीं है। जिसके शास्ना—गलकम्बल हो, ककुद् हो उसको गाय कहते हैं, गायके लक्षण इसमें घटित नहीं हैं। यह सुनकर चित्र बनानेवाला झेंप गया।

अभी कुछ समय पूर्वकी बात है। कल्याण-पत्रमें एक लेख आया था कि 'जर्मनीमें एक मांसाहारी जंगली पशु था, जिसका ऐन गायके जैसे चार थनवाला था, वह मांसाहारी जंगली पशु था, उस पशुको वहाँके लोगोंने पकड़ा और सूअर एवं भैंसा—इन पशुओंसे संक्रमण कराकर उससे एक नस्ल तैयार की, उसी नस्लका नाम है जर्सी। इसलिये गायकी प्रकृतिसे उसकी प्रकृति बिलकुल भी मिलती-जुलती नहीं। हम भैंसका दूध पीनेका समर्थन नहीं कर रहे हैं, लेकिन हम समझते हैं कि जर्सीकी अपेक्षा भैंसका दूध पीना उतना बुरा नहीं है। यद्यपि व्रत गायके दूध पीनेका ही रहना चाहिये, किंतु जर्सीका दूध तो बिलकुल गुणवत्तायुक्त नहीं है। अनेक प्रकारके उसमें रोग हैं। हमने देखा तो नहीं है, पर सुना है कि उस जर्सीको मांसके टुकड़े भी भूसेमें डालकर खिलाये जायँ तो वह खा लेगी; क्योंकि इसकी जो मूल प्रकृति है, वह मांसाहारी है, किंतु देशी गाय तो घास आदिका ही सेवन करती है, ऐसा सुना जाता है कि देशी गाय किसीका जूठा पानीतक नहीं पीती।

महापुरुषोंके श्रीमुखसे ऐसा सुना गया है कि अपनी भारतीय गायमें 'सूर्यकेतु' नामकी नाड़ी होती है, जो सूर्यनारायणसे सीधा सम्पर्क

रखती है और 'गौ-किरण' जो सूर्यमें आती है, वह सीधे गोलोकसे आती है। हमारी भारतीय गाय चौबीसों घंटे गोलोकके सीधे सम्पर्कमें रहती है, इसलिये गोलोककी जो पावनता है, जो दिव्यता है, जो निर्विकारिता है, वह उस गायके दूधमें, दहीमें, गोमूत्रमें और गोमयमें मिश्रित होती है। उसके रोम-रोममें वह दिव्यता होती है, जिसको हम गायकी सेवा करके और गव्य-पदार्थोंका सेवन करके प्राप्त करते हैं।

आज विश्वमें जो भी समस्याएँ हैं, उन सारी समस्याओंका मूल है रजोगुण, तमोगुणकी वृद्धि और इनकी आशातीत वृद्धिका एकमात्र कारण है—गायका वध। इसलिये जबतक गोवध पूर्ण प्रतिबन्धित नहीं होता, तबतक पृथ्वीपर सात्त्विक वातावरण प्रभावी नहीं हो सकता।

पृथ्वीके सात सुदृढ़ स्तम्भ हैं—गाय, ब्राह्मण, वेद, सती स्त्री, सत्यवादी, लोभरहित तथा दानशील। इनमें पहला ही स्तम्भ है—गाय। सातके ऊपर पृथ्वी टिकी हुई है। उन सात खम्भोंमें पहला खम्भा है—गाय। गायमें देवता, तीर्थ, हव्य, कव्य प्रतिष्ठित हैं, इसलिये गाय सनातन संस्कृतिका मूल आधार है। गायके नष्ट होनेसे ब्राह्मण संस्कारच्युत हो रहे हैं। सन्ध्या-गायत्रीसे उन्हें कोई मतलब नहीं, जनेऊ भी नहीं पहनते, चोटी नहीं रखते। वस्तुतः उनकी धर्म और सदाचारमें कोई निष्ठा नहीं रह गयी है। ऐसे दूषित संस्कार ब्राह्मणजातिमें कैसे आ गये? इसका कारण है कि गाय नष्ट हो रही है। गायके नष्ट होते ही ब्राह्मण नष्ट हो जायगा। शास्त्रमें लिखा है कि गायोंका कुल और ब्राह्मणोंका कुल—दोनों एक है। इसलिये एक है; क्योंकि एकमें मन्त्र प्रतिष्ठित हैं और एकमें हविष्य प्रतिष्ठित है। ब्राह्मण नष्ट हो जायँगे तो वेद नष्ट हो जायँगे। तीसरा खम्भा है वेद। और जब गाय, ब्राह्मण, वेद—ये तीनों नष्ट हो जायँगे तो समाजमें सदाचार नहीं रहेगा और सदाचारके बिना सतीत्वकी कल्पना नहीं की जा सकती। फिर साध्वी, पतिव्रता नारियाँ भी नहीं होंगी और जब पतिव्रता नारियाँ नहीं होंगी तो लोभरहित, सत्यवादी और दानशील पुरुष कहाँसे आयेंगे? ऐसे
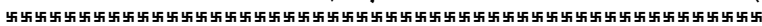
महापुरुष सती नारियोंकी कोखसे ही जन्म लेते हैं, तो मूलमें गाय ही है। इसलिये गायके सुदृढ़ होते ही इसी धरतीपर सत्ययुगका वातावरण आ जायगा।

दुर्भाग्यसे भारतमें जिन लोगोंकी गायमें श्रद्धा नहीं थी, ऐसे लोगोंके हाथ शासन आया और आज भी ऐसे ही लोगोंके हाथमें शासन है। सब एक-से ही हैं; क्योंकि धर्मको निष्ठापूर्वक अंगीकार करनेके लिये सत्यनिष्ठा चाहिये, त्यागकी भावना चाहिये जो इन शासकोंमें नहीं है, इनसे क्या आशा की जा सकती है!

अब तो एक ही बात है ठाकुरजी कृपा करें। अपने परिकरमेंसे सन्तोंको भेजें तो भगवत्कृपासे यह कार्य सम्भव है। हम तो भगवान्से बार-बार प्रार्थना करते हैं, हे प्रभो! जैसे संत हमें आज प्रभुकृपासे देखनेको मिल रहे हैं, ऐसे संत भगवान् अनेककी संख्यामें धरतीपर भेजें तो एक बहुत बड़ा आदर्श प्रकट हो जायगा।

आज हमारी बुद्धिमें बैठा हुआ है कि जो भोले-भाले भारतीय किसान हैं, उनका अन्न बड़ा पवित्र है—कोई झूठ नहीं, कोई फरेब नहीं, यह बात सच्ची भी है, लेकिन आज परिस्थिति इतनी विकट आ गयी है कि अब सहसा यह भी कह पाना कठिन है कि सभी किसानोंका अन्न शुद्ध रहा। वे श्रमपूर्वक खेती करते हैं, अन्नका उत्पादन करते हैं, किंतु अपनी बूढ़ी गाय और अपने नवजात बछड़े कसाइयोंके हाथ बेच देते हैं। उनको भार लगता है और वे यह अच्छी प्रकारसे जानते हैं कि जब यह गोधन हमारे लिये उपयोगी नहीं है तो दूसरेके लिये उपयोगी क्या होगा? वे बेचनेवाले यह भी जानते हैं कि इसको खरीदनेवाला कसाई है और इसका वह वध करेगा। फिर भी व्यर्थमें ही वे गोवधका पाप ले लेते हैं, अपने सिरपर चढ़ा लेते हैं।

कैसा दुर्भाग्य है! प्रातःकाल होनेतक ५० से ६० हजारतक गोवंश काट दिया जाता है। यह धरती जो गायके गोबर और गोमूत्रसे सिंचित होती थी, वह आज गायके रक्तसे रंजित हो रही है। क्या धरती

छूनेयोग्य रही? उन कत्लखानोंसे जो हड्डियाँ एकत्रित की जाती हैं, उनसे फास्फोरस आदि रासायनिक खाद तैयार होती है और उसको खेतोंमें डाला जा रहा है। अन्नमें गोवधके परमाणु व्याप्त हो रहे हैं। श्रद्धा कैसे हो गायके प्रति!

हमारे यहाँ गायोंको घटोध्नी कहा जाता है, क्योंकि उनका जो ऐन—ऊधस् है, वह घड़ेके जैसा हुआ करता था। ऐसी-ऐसी गायोंका वर्णन है, जिनके थन भूमिका स्पर्श करनेमें केवल चार अंगुल ही ऊपर रह जाते थे। वे ऊँचे स्थलसे जाती थीं तो धरतीका स्पर्श करते थे। हमारे गुरुजी तो कहते थे—यहाँ 'घट' शब्दका अर्थ है, जिसमें एक मन दूध आ जाय यानी एक मन दूध जिसके ऐनमें आ जाय, उसको घटोध्नी कहते हैं। भागवतमें लिखा है कि जैसे अत्याचार, अनाचार बढ़ेगा तो वे घटोध्नी गौएँ बकरी-जैसी कम दूध देनेवाली हो जायँगी, कारण यह है कि गायका हमें जैसा आदर करना चाहिये, वैसा आदर हम नहीं कर रहे हैं।

एक महात्मा थे, जंगलमें रहते थे और १००-२०० गायें उनके साथ रहती थीं। घोर जंगलमें घूमते रहते। वे विलक्षण महात्मा थे, गौर वर्ण था, विशाल उनकी जटाएँ थीं, अवधूत थे। एक मोटा आड़बन्द और एक कौपीन, इनके अतिरिक्त कोई वस्त्र सर्दी, गर्मी, बरसातमें नहीं रहता था और एक लट्ठ हाथमें रखते थे। गाय चराते रहना और जब भूख लगे तो अपने-आप कोई-न-कोई गोमाता उनके निकट चली आती। पीठ थपथपाकर उसके थनमें मुँह लगाया और भिक्षा ग्रहण कर ली। १०-५ गायोंसे मधुकरी लेते थे। बछड़ा भी पी रहा है और बाबाजी भी पी रहे हैं। सब गायें उनको अपने बछड़े-जैसे ही चाट-चाट करके दूध पिलाती थीं। वे सिद्ध-महात्मा कभी प्रकट हो जाते, कभी अन्तर्हित हो जाते, लोग दर्शन करने जाते तो गाय चराते-चराते बाबा अन्तर्धान हो जाते। गाय दिखायी पड़ रही है, बाबा नहीं दिख रहे हैं। परम सिद्ध सन्त थे और उनकी आयु सैकड़ों वर्ष थी। तपे
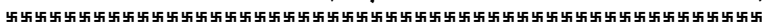
हुए सोनेके समान उनका वर्ण सुना है हमने। जिन लोगोंने उनका दर्शन किया, वे कहते थे कि अन्धकारमें वे घूमते तो एक दिव्य कान्ति उनके शरीरसे छिटकती रहती, प्रकाश निकलता था, केवल गोदुग्धका ही आहार करते थे, वह भी दुह करके नहीं, सीधे मुँह लगा करके। उनके शिष्य भी गौ चराते थे। उनका स्मरण करके चित्तमें यह बात आती है कि वस्तुतः वे कितनी उच्च कोटिके महान् योगी थे, आध्यात्मिक शक्तियोंसे सम्पन्न थे, दीर्घायु थे। निश्चित ही इसमें उनकी जो गोसेवा है, गोभक्ति है और केवल गव्य पदार्थोंको ही भिक्षाके रूपमें ग्रहण करना—ये ही कारण हैं। उनकी आध्यात्मिक उच्च अवस्थाको प्राप्त करानेमें ये ही विशेष बातें रही होंगी।

भगवान्‌के अवतारोंद्वारा गोसेवा

चौबीस अवतारोंमें भगवान् दत्तात्रेय परम गो-सेवक हैं। गायके प्रति दत्तभगवान्‌की बड़ी प्रीति है, इसलिये दत्तात्रेयजीके चित्रपटमें गाय जरूर होती है। वे गौसे टिक करके खड़े हुए दिखायी देते हैं। गोपालजी भी जहाँ-कहीं हैं, गायके साथ हैं। साक्षात् कामधेनु सदा-सर्वदा उनके साथ रहती है।

आज जगह-जगह इतने बड़े-बड़े धार्मिक अनुष्ठान हो रहे हैं, आयोजन हो रहे हैं फिर भी जैसा लाभ होना चाहिये, वैसा लाभ नहीं दिखायी पड़ रहा है। इसका मूल कारण यही है कि गोवध-जैसा भयंकर पाप हो रहा है। यह कलंक मिट जाय और फिर जो आयोजन हो रहे हैं, वे हों तो सत्ययुग लौट आयेगा। इसलिये जहाँसे रोग है, वहाँसे उसे दूर किया जाय तो तभी रोग दूर होगा। सारी समस्याओंकी जड़ है गो-हत्या और सारी समस्याओंका समाधान है गायकी सेवा, गायकी रक्षा, गायका आदर; क्योंकि भगवान्‌की सृष्टिके जितने प्राणी हैं, उन समस्त प्राणियोंमें भगवान्‌ने सम्पूर्ण सात्त्विकता गायके भीतर विराजमान की है। जिसके गोमूत्र और गोबरसे लिपे-पुते घरको देखकर मनमें सात्त्विकता आ जाय, वह कैसा सात्त्विक प्राणी होगा!

तो ऐसी गायके गोबर और गोमूत्रसे सब धरती सिंचित हो तो सब जगह सात्त्विकताका वातावरण आ जायगा तब अत्याचार नहीं होगा, दुर्भिक्ष नहीं होगा, फिर समस्त प्राणियोंकी एक-दूसरेके साथ सद्भावना होगी। पथमेड़ा-धामके गो-सदनमें सबेरे परिक्रमा करने जाओ तो गोसेवा-सदनके छोटे-छोटे बच्चे नंग-धड़ंग घूमनेवाले, रजमें लोटनेवाले श्रद्धासे प्रणाम करते हैं। कहते हैं 'हरि ॐ बाबाजी हरि ॐ'। हमारे मनमें आता है कि भाई, इतने छोटे बच्चोंको कौन सिखाता है! तब समझमें आता है कि ये जो गायकी सात्त्विकता है, इस कारण इन बालकोंमें यह संस्कार है। इनको कोई सिखानेवाला नहीं, लेकिन ये सौभाग्यशाली बालक हैं, जो गो-रजमें जन्म ले रहे हैं, जन्मसे ही गायका दर्शन कर रहे हैं, ये निश्चित बड़े भाग्यशाली हैं।

गोवधके कारण ही तमोगुण बढ़ा है। रजोगुण और भोगवादी प्रवृत्ति बढ़ी है। अधर्म, अन्याय, अत्याचार बढ़ा है, तो यहाँसे जो सुधार होगा तो फिर सब ठीक हो जायगा। हालहीमें एक जगहसे सूचना प्राप्त हुई थी कि उत्तर प्रदेशके ही इलाकेमें करीब एक हजार गोवंश, जिसमें छोटे-छोटे बछड़े, बछिया और बड़ी-बूढ़ी गायें भी थीं, उनको कसाई घेरकर ले जा रहे थे। एक-दो सन्तोंने घेर करके उनको खदेड़ा और गायोंको बचानेका प्रयास किया, तो उस गाँवके लोग उन सन्तोंके साथ अभद्र व्यवहार करने, मारने-पीटने आ गये, 'हमने बेची हैं, तुम क्यों पकड़ रहे हो?' पचास-पचास, सौ-सौ रुपयेमें गाय बेच दी। बछड़े बेच दिये। किसीने तो पालनेका झंझट समझकर ऐसे ही दे दिये। बादमें थानेमें वे सन्त बैठे थे और रातको उनका फोन आया—महाराज! क्या करें। यहाँ कोई आस-पास गोसदन नहीं है। कहाँ ले जायँ? थानेदार कहता है कि बाबा! आप लोगोंने छुड़ाया है, तो हमारे पास कोई व्यवस्था नहीं है, आप ही इनकी व्यवस्था करो।

—यह सुनकर चित्त बहुत व्याकुल हुआ कि भई, गायकी रक्षा तो कैसे भी करना कर्तव्य है। सोचिये यह हालत है हिन्दुओंकी।

अपनेको हिन्दू कहनेवाले, किसान और उत्तम जातिके कहनेवाले लोग, वे जानते हैं कि ये कसाई हैं और उनको गाय बेच रहे हैं—ये स्थिति हो गयी है। इसलिये बहुत बड़ी आवश्यकता है कि बड़ी मात्रामें गोसदन खोले जायँ और इस पुनीत कार्यमें सबको लग जाना चाहिये। भगवान्‌ने कृपा करके जिसको जितनी ऊर्जा प्रदान की है, सामर्थ्य प्रदान की है, उसका उपयोग गोसेवामें करे, गोरक्षामें करे।

कई प्रान्तोंमें गोहत्या-बन्दीका कानून बन गया, किंतु विडम्बना है कि इन्हीं प्रान्तोंसे गोधन कसाइयोंके पास जा रहा है, तो थोथे कानून बनानेसे क्या लाभ? जबतक उसको कठोरतापूर्वक लागू न किया जाय। आज बड़े-बड़े हॉस्पीटल खुल रहे हैं, बड़ी-बड़ी धार्मिक संस्थाएँ खुल रही हैं, बड़े-बड़े मन्दिर और मठ बन रहे हैं। यहाँ किसीका विरोध करनेका कोई प्रयोजन नहीं है, जो जहाँ हो रहा है, प्रभु-कृपासे ठीक ही हो रहा है, लेकिन इस समयकी आवश्यकता है कि गोशालाएँ बनें और उनमें यथार्थरूपमें गोसेवा हो, गोधनकी रक्षा हो, इससे श्रेष्ठ कर्म और कोई दूसरा नहीं है। सबसे श्रेष्ठ शुभ कर्म यही है; क्योंकि सर्वाधिक अत्याचार यदि किसी प्राणीपर हो रहा है तो वह है गाय।

आजकलकी शिक्षा ऐसी बनायी गयी है कि मनुष्यका पूर्वज बन्दर था। उसके पहले पूँछ थी, वह बादमें घिस गयी। भगवान् जाने कैसे पूँछ घिस गयी! आर्य यहाँ नहीं बसते थे। यह तो अनार्योंका देश था, आर्य बाहरसे आये—ऐसी-ऐसी बातें ग्रन्थोंमें पढ़ायी जा रही हैं। लोग पढ़ते हैं। दुर्भाग्य है देशका, ऐसी शिक्षा मिल रही है। आमूल परिवर्तन करना पड़ेगा। जबतक यह परिवर्तन नहीं होगा, तबतक गायके प्रति महत्त्व-बुद्धि बननेवाली है नहीं। इसलिये बहुत बड़े पैमानेपर प्रयास करनेकी आवश्यकता है और इसके लिये पहली आवश्यकता यह है कि कम-से-कम जितने महात्मा हैं, आध्यात्मिक पथके पथिक महानुभाव हैं, वे चाहे किसी मतके हों, किसी सम्प्रदायके

हों—सब कम-से-कम गोरक्षाके विषयमें एकजुट हो जायँ; क्योंकि गायके सम्बन्धमें किसीका कोई मतभेद नहीं हो सकता। गायके बिना कोई वैदिक उपासना सम्भव नहीं है। आज कोई लाखों रुपयोंका मन्दिर बना रहा है, कोई करोड़ों रुपयोंका, इस प्रकार होड़ लगी है तो ऐसी प्रवृत्ति छोड़ करके उन्हें चाहिये कि इन रुपयोंसे गोशालाएँ बनायें। इससे वस्तुतः भारतवर्षकी सच्ची सेवा होगी। सब प्रान्तोंमें दो-दो, तीन-तीन गोशालाएँ बड़ी-बड़ी बन जायँ तो वहाँकी सारी भूमि उर्वराशक्तिसे सम्पन्न हो जायगी, उपजाऊ हो जायगी और बेरोजगारीकी समस्याका कितने बड़े पैमानेपर समाधान हो जायगा। आज इन सबकी आवश्यकता है, इसीमें अपनी ऊर्जाका उपयोग करना चाहिये।

एक बार भगवान् शंकरसे ऋषियोंका कुछ अपराध बन गया, तब ऋषियोंके क्रोधसे शंकरभगवान्‌के शरीरमें जलन होने लगी। उस जलनको मिटानेके लिये शंकरजी सुरभिगौकी शरणमें गये और उसकी स्तुति की। पुराणोंमें शंकरभगवान्‌द्वारा की गयी सुरभिगौकी स्तुति प्रसिद्ध है। तब सुरभिगौने अपना मुँह खोला और भगवान् शंकर उसके मुखमें चले गये। अब तो त्रिलोकीमें हाहाकार मच गया। ब्रह्माजी, इन्द्रादि सभी देवता सुरभिगायके निकट गये और उसकी स्तुति की। बोले—हे माता! अष्टमूर्ति भगवान् शिव आपके उदरमें विराजमान हैं, इन्हें मुक्त कीजिये। तब भगवान् शिवने अवतार ग्रहण किया वृषभरूपमें, यही धर्म है। वृषभ क्या है? चतुष्पाद वृषभ—ये ही धर्म हैं। इनको नन्दी कहा गया। भगवान् शंकरने नीलवृषभका रूप धारण किया। उनकी सबने स्तुति की और उस समय उस नीलवृषभको धर्मका स्वरूप माना गया। इस पौराणिक कथासे यह स्पष्ट है कि धर्म भी गायसे प्रकट है। धर्मकी जननी भी गाय है। यदि गाय नहीं होगी तो धर्म भी नहीं होगा और शंकरजी धर्मपर आरूढ़ हैं अर्थात् शिवतत्त्वको ढोनेका सामर्थ्य धर्ममें ही है, किसी सामान्य प्राणीमें नहीं। भगवान् शंकर अपने श्रीअंगमें विभूति (भस्म) धारण करते हैं, वह
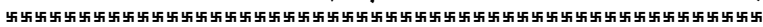
गोमयकी ही भस्म है। गाय स्वाभाविक रूपसे चरती हुई गोबर करती है। जंगलमें वह सूर्यकी किरणोंसे सूख जाता है। उन कंडोंको संस्कृतमें आरण्यक कहते हैं। उस कंडेकी अग्निमें हवन करनेकी बहुत बड़ी महिमा है, उस कंडेकी भस्मको भगवान् शंकर धारण करते हैं।

सबको अपने-अपने वर्ण-धर्मका अनुष्ठान करना चाहिये, पराये धर्मका नहीं। पर विशेष बात यह है कि गायकी सेवा करना चारों वर्णोंका धर्म है। कुछ ऐसे धर्म हैं, जिनका पालन सबको करना चाहिये। गाय सबकी माता है, सबको सुख देनेवाली है, इसलिये अपनी माताकी सेवा करना सबका धर्म है। चारों वर्ण और चारों आश्रमोंका परम धर्म है—गोसेवा करना। भगवान्ने कृष्णरूपसे अवतार लेकर गोसेवा करना ही सिखाया। ठाकुरजी सब जानते हैं, उनसे कुछ छिपा थोड़े ही है। सत्ययुग एवं त्रेताके लोगोंको गोसेवा सिखानी नहीं है। द्वापरके लोगोंको भी कुछ सिखानेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि उस समयतक गाय अपने महिमामण्डित रूपसे विराजमान थी। गाय सबके हृदय और प्राणमें बसी हुई थी उस समयतक, इसलिये उनको विशेष समझाने-सिखानेकी आवश्यकता नहीं थी, किंतु कलिकालके लोग प्राणिमात्रकी तथा जगत्की जननी गायकी महिमाको नहीं समझेंगे, इसलिये भगवान्ने गोचारण करके लोगोंको गोसेवाकी शिक्षा दी।

वास्तवमें सच्चे अर्थोंमें श्रीकृष्णभक्त कहलानेका अधिकारी वही है, जो श्रीकृष्णद्वारा प्रतिष्ठित गोसेवा, गोचारण और गोमहिमाको स्वीकार करे।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षका आश्रय—गाय

कामधेनुके दूधकी खीरसे श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न—चारों सरकार प्रकट हुए। एक बार प्रभु श्रीरामने जानकीजीसे कहा, देखो देवि! मैं अपने प्राणोंका परित्याग कर सकता हूँ, तुम्हारा परित्याग कर सकता हूँ। लक्ष्मणका भी परित्याग कर सकता हूँ, लेकिन गाय और ब्राह्मणकी रक्षाकी प्रतिज्ञाका परित्याग नहीं कर सकता। गाय और

ब्राह्मण धर्मके आधार हैं। ***‘बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।’*** इन चारोंसे चारों पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। हमारे यहाँ ब्राह्मण धर्म हैं, ब्राह्मण धर्मशास्त्रके ज्ञाता हैं। धर्म शील है, अर्थ है गाय। हमारी अर्थव्यवस्थाका आधार गाय है और जबतक यह बात हमारी समझमें नहीं आयेगी कि हमारी अर्थव्यवस्थाका आधार गाय है तबतक भारतकी गरीबी मिटनेवाली नहीं है। गोमांस–विक्रय–जैसे जघन्य पापके द्वारा इसकी दरिद्रता हटेगी नहीं, बढ़ती चली जायगी। यदि यह पाप होता रहा तो एक दिन ऐसा आयेगा कि एक दाना नहीं मिलेगा खानेको। ‘अर्थशास्त्र’ के प्रणेता कौटल्य*ने अर्थव्यवस्थाका मूल गायको माना है और हमारे पुराणोंमें भी राजाओंकी समृद्धि गायसे आँकी जाती थी। धर्मराज युधिष्ठिरके सम्बन्धमें कहा जाता है कि दस हजार गोसदन तो उनके इन्द्रप्रस्थके क्षेत्रमें ही थे और उस प्रत्येक गोसदनमें अस्सी हजारसे कम गोवंश नहीं था। राजा और प्रजा दोनोंकी समृद्धि गायकी सम्पत्तिसे ही आँकी जाती थी। गायका आदर होने लग जाय और सनातन धर्मकी मर्यादाको हम सही–सही माननेवाले हो जायँ तो यह धरती बिना जोते–बोये अन्न देनेवाली हो जायगी। इस बातको लेशमात्र भी असत्य नहीं मानना चाहिये, पर यह बात तभी साकार हो सकेगी, जब धरतीपर गायका आदर होगा, क्योंकि यह कामधेनु है। एक सन्तने कहा है कि यदि हृदयमें सद्भाव हो तो प्रत्येक तुलसीका पौधा कल्पवृक्ष है, प्रत्येक गाय कामधेनु है और प्रत्येक शालग्राम–शिला चिन्तामणि है। ये तीनों साक्षात् परमात्माके स्वरूप हैं।

परंतु विचार करनेपर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गाय केवल

---

* कूटो घटः तं धान्यपूर्णं लान्ति संगृह्णन्ति इति कुटलाः। कुम्भीधान्याः त्यागपरा ब्राह्मणश्रेष्ठाः। तेषां गोत्रापत्यं कौटल्यो विष्णुगुप्तो नाम। (कौटल्य–अर्थशास्त्र)

अर्थात् कूट घटका नाम है। जो लोग एक घटसे अधिक अन्नका संग्रह नहीं करते थे, उन कुम्भीधान्य नामक अत्यन्त श्रेष्ठ ब्राह्मणोंका गोत्रापत्य कौटल्य कहलाता है। कौटल्यका मुख्य नाम विष्णुगुप्त है।
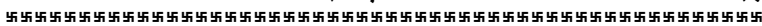
अर्थ ही नहीं है, गाय धर्म भी है, कामधेनु होनेसे काम भी है और मोक्षप्रद होनेसे मोक्ष भी है। धर्मात्मा, श्रद्धावान् तथा आस्तिक पुरुषको गायकी सेवासे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंकी प्राप्ति होती है, लेकिन जो नास्तिक हैं, जो धर्म तथा मोक्ष नहीं मानते हैं, अर्थ तथा कामका महत्त्व तो उनकी दृष्टिमें भी रहता ही है, तो अर्थ तथा कामकी प्राप्तिके लिये उन्हें भी गौकी शरण ही लेनी पड़ती है।

वर्तमान-स्थिति

वर्तमानमें कदम-कदमपर मद्यशालाएँ खुली हैं। राम! राम! यही उन्नति है? जैसे कदम-कदमपर मद्यशालाएँ हैं, वैसे ही कदम-कदमपर गोशालाएँ होंगी, तब भारतवर्षकी उन्नति होगी। गायका दूध पीनेको मिलेगा, तब उन्नति होगी।

उन्नति है जीवनमें सात्त्विकताका विकास। यही उन्नति जीवनको समृद्ध बनाती है। महापुरुषोंसे सुननेको मिला है कि सर्वाधिक सात्त्विकता गायमें निहित है, इसलिये गोसेवा और गव्य पदार्थोंका सेवन—यही एक उपाय है अपनेमें सात्त्विकताके अर्जनका। इस प्रकारसे सात्त्विकताका अर्जन करके ही हमारी वास्तविक उन्नति होगी।

आज गायकी सेवा ठीकसे नहीं हो पा रही है, बहुत-सी गोशालाएँ ऐसी हैं, जहाँ यह व्यवस्था नहीं है कि वे दो समय गायकी भिक्षा ठीकसे करा सकें, अभावग्रस्त हैं। गौएँ सटके खड़ी रहती हैं, उन्हें खुली जगह घूमनेको नहीं है, इसलिये वर्तमानका समय ऐसा है कि गौओंका ध्यान रखा जाय। सच्ची ठाकुरसेवा गोसेवा है और गोसेवा ही सच्ची सन्तसेवा है। गोसेवा ही दीन, दुःखी, दरिद्रकी सेवा है और यदि गोसेवा ठीकसे होगी तो तभी गोसेवापर आधारित ठाकुरसेवा, सन्तसेवा और अतिथिसेवा ठीकसे हो सकेगी।

बड़े-बड़े मन्दिरोंमें बड़े-बड़े उत्सव, महोत्सव मनाये जा रहे हैं, बड़े-बड़े खर्च हो रहे हैं, अच्छी बात है, होने ही चाहिये। उत्सवोंसे

मन्दिरकी शोभा है, किंतु वहाँ गव्य पदार्थोंका उपयोग भगवान्‌की सेवामें नहीं किया जा रहा है, इसलिये वह ईमानदारीकी ठाकुरसेवा नहीं है, वह ठाकुरसेवाके नामपर अपना प्रचार–प्रसार है, अतः इससे बचना चाहिये।

यदि हम सच्चे अर्थोंमें ठाकुर–सेवा करना चाहते हैं तो इसके लिये हमें पहले गोसेवा करनी होगी। भारतके जितने बड़े–बड़े मन्दिर हैं, तीर्थ हैं, इनके संचालक, सभी सनातनधर्मी, धर्माचार्य एक साथ बैठकर यह निर्णय करें कि हम गव्य–पदार्थोंका ही उपयोग भगवान्‌की सेवामें करेंगे। ऐसा निर्णय कर लें तो गोवध स्वतः बन्द हो जायगा। आज ठाकुरजी बकरी या भैंसके दूधसे नहा रहे हैं। गव्य पदार्थोंसे निर्मित पंचामृत उन्हें उपलब्ध नहीं है। हमारी ठाकुर–सेवा केवल दम्भ है, इसलिये ठाकुर–सेवाका भी मूल आधार गाय है।

आप विचार करें हम–आप तो अल्पज्ञ जीव हैं। घीमें चर्बी है, यह हम नहीं जानते, लेकिन गोपालजी, जिनकी उपास्य देवता गोमाता हैं, वे तो सर्वज्ञ हैं। घीमें चर्बी है, उसकी मिठाइयाँ बनीं, पूड़ी, पकवान् बने—हम तो नहीं जानते, इसलिये खा लेंगे, लेकिन गोपालजी चर्बीयुक्त घी, तेलसे बने पदार्थ क्या स्वीकार करेंगे? और जब भगवान् उस पदार्थको ग्रहण नहीं करेंगे तो वह प्रसाद कैसे होगा?

आज बड़े–बड़े यज्ञ हो रहे हैं, लेकिन चर्बीयुक्त घी आहुतिके नामपर डाली जायगी तो देवताओंका बल बढ़ेगा कि राक्षसोंका? आप एक गाय पालते हैं अपने घरमें और दूध औटाया है, बढ़िया जामन देकर उसको जमाया है। भले ही छोटी कमोरीमें, छोटी मथानीसे मथकर सुन्दर माखन थोड़ा–सा निकाल लिया और एक बूँद घी गायके कण्डेकी अग्निपर डाल दी तो हविको ग्रहण करने भगवान् वैकुण्ठ छोड़कर आ जायँगे और दूषित द्रव्योंसे मिश्रित पीपेका घी आप आगमें उड़ेल देंगे, उससे भगवान्‌की प्रसन्नता नहीं होगी।
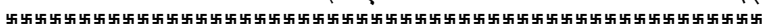
इसलिये जितने मठ-मन्दिर हैं, हमारे हिन्दू धर्मके जितने प्रतिष्ठान हैं, सभीमें यह निश्चय कर लिया जाय कि गायके दूध, दही, घृत और गायके दूधसे बने खोवेकी मिठाइयोंका ही मन्दिरमें भोग लगेगा तो स्वाभाविक है कि प्रत्येक मन्दिरकी बड़ी-से-बड़ी अपनी गोशाला होगी और जो मिष्टान्नकी दूकान खोलकर बैठे हैं, वे गोशालाएँ खोलेंगे और वहाँसे गव्य-पदार्थ मिलेंगे, इससे पुनः समृद्धि लौट करके आ जायगी। मन्दिरकी अपनी निजी दूकानें होंगी तो लोग शुद्ध वस्तु वहाँसे खरीदकर ले जायँगे, जिससे उनके अन्तःकरणकी शुद्धि होगी और भगवान् भी प्रसन्न होंगे, उनका आशीर्वाद प्राप्त होगा।

जब हम शुद्ध गव्य पदार्थोंका उपयोग करेंगे तो हमारा स्वास्थ्य भी उत्तम होगा, रोग भी नहीं होंगे, कम होंगे और जो ये हॉस्पीटल जगह-जगह खुले हैं, वे बन्द हो जायँगे, कम हो जायँगे।

एक गोमाताकी सेवाको हम सावधानीपूर्वक साध लें तो एक गायके पुष्ट होनेसे सारा समाज पुष्ट हो जायगा, कहीं कोई कुपोषण-अपोषण नहीं रह जायगा, पर दुःख एवं दुर्भाग्यकी बात है कि कैसी बुद्धि हो गयी है, कैसे विचार हो गये लोगोंके कि इन बातोंको कहनेपर वे तो ध्यान ही नहीं देते, स्वीकार ही नहीं करते।

प्रयाग कुम्भकी बात है, वहाँ जानेसे पूर्व गिरिराजजीवाले बाबाने कहा कि आप जा रहे हैं तो महामण्डलेश्वरोंको, जगद्गुरुओंको, उन सभीको जहाँ-जहाँ आप मिलें लोगोंसे, आप प्रेरित करना कि कुम्भमें बड़े-बड़े भण्डारे हो रहे हैं, उनमें कोई एक लाखका, कोई पाँच लाखका—कितनी-कितनी बड़ी राशिसे भण्डारे हो रहे हैं तो प्रत्येक स्थानसे कुछ गायका अंश निकाला जाय तो इतना बड़ा समाज वहाँ उपस्थित हुआ है, कितनी बड़ी राशि गोसेवाके लिये जमा हो जायगी, उससे कितनी गायोंका पोषण होगा।

यह सब वहाँ कहा भी गया, किंतु उसका कोई लाभ नहीं हुआ।

हमने आकरके महाराजजीको बताया तो बाबा बोले—क्या करें, वायुमण्डलमें गोवधके परमाणु व्याप्त हो गये हैं, इसलिये वे बुद्धिको उतना पवित्र नहीं होने दे रहे हैं।

अर्थका सच्चा सदुपयोग है—गोसेवा। सौ वेदज्ञ ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दक्षिणा देनेका जो फल प्राप्त होता है, वही पुण्यफल केवल एक गायको चारा खिलानेसे हो जाता है। गायके गोष्ठमें की जानेवाली प्रत्येक शुभ क्रिया सौ-गुनी पुण्यदायी हो जाती है।

गोसेवासे चारित्रिक गुणोंका विकास

तितिक्षा यानी सहनशीलता। यह तितिक्षा साधुका पहला गुण है और साक्षात् तितिक्षाकी मूर्ति है—गाय। इसलिये गायका एक नाम है—सर्वसहा; क्योंकि यह सब कुछ अपने ऊपर सहन कर लेती है। गाय भगवान्‌की मूर्ति है। भगवान्‌की प्रतिमा है। यदि गायकी रक्षा नहीं हुई तो मन्दिर और मूर्तियाँ नहीं बचेंगी, इसलिये गायकी रक्षा करना मुख्य कर्तव्य है, क्योंकि गाय धर्मकी जननी है।

भगवान्‌की अनन्य भक्ति करनेसे शीलगुण आ जाता है और भगवान्‌की प्रतीक है—गाय, इसलिये गायकी सेवा करनेसे भी शीलगुण आ जाता है।

गुरुदेव श्रीभक्तमालीजीके पास एक कोई महानुभाव आये और बोले—महाराज! गुस्सा बहुत आता है, यह न रहे, इसका कोई उपाय? तो महाराजने कहा कि पहले तो हमारे भीतर क्रोध सर्वथा न रहे तब हम आपको उपाय बतायें। गुस्सा तो हमें भी आता है। जो भाई सर्वथा निर्विकार हो चुका हो उससे पूछो, ऐसी स्थिति हमारी तो है नहीं। इसपर वे बोले—नहीं महाराज! कुछ तो उपाय बताइये। कथा-वार्ता बहुत सुनते हैं, क्रोध नहीं करना चाहिये। क्रोध करनेसे अपनी ही हानि है, लेकिन क्या करें, भीतरकी कठोरता कम नहीं हो रही है, क्रोध कम नहीं हो रहा है।

महाराजजी बोले—क्या कुछ करनेके लिये तत्पर हैं आप? 'हाँ
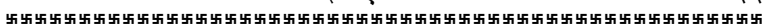
महाराज! जो आप कहेंगे सो हम करेंगे।' महाराजजीने कहा—'प्रात:काल रोज गोशालामें जाया करो और वहाँ मौन रहकर गायोंकी सेवा किया करो। गायका जो गलकम्बलवाला भाग है, उसको सहलाओ। गायकी पीठपर खूब बढ़ियासे हाथ फेरो, गाय सुखी हो जाय, ऐसा करो। प्रेमपूर्वक गायको देखो और गायके छोटे-छोटे बच्चे हैं ना दूध पीनेवाले—उनसे खूब खेलो, उनको खूब प्यार-दुलार करो। थोड़े ही दिनोंमें तुम्हारा क्रोध ही नहीं, सारे विकार नष्ट हो जायँगे और शीलगुणका प्रकाश हो जायगा; क्योंकि गायकी सेवा करनेवाला व्यक्ति शीलवान् हो जाता है।' तो हृदयमें प्रेम और दया आदि भाव समृद्ध हों, इसका उपाय गायकी सेवा है।

गो-तत्त्वका निर्माण कुछ ऐसा किया है भगवान्ने कि यह बहुत कृतज्ञ है। इनमें बहुत कृतज्ञता होती है। गायका स्वयंका कोई अपमान करे तो गाय सहन कर लेगी, लेकिन गायकी कोई निष्ठापूर्वक सेवा करे और उसका कोई तिरस्कार करे तो गायसे सहन नहीं होता। श्रीसुदर्शन सिंहजी 'चक्र' के जीवनचरित्रमें है कि उनके पिताजीने अपने छोटे भाई अर्थात् चक्रजीके चाचाजीको एक तमाचा उस समय मार दिया जब वे गोशालामें थे। अब जितनी गायें थीं, सबने रस्सा तोड़ लिया और वे दौड़ी क्रोधमें भरकर उन्हें मारने। निश्चित ही वे उन्हें मार ही देतीं उस दिन यदि वे अपने बड़े भाईको बचानेके लिये उनके ऊपर न गिर गये होते और उनको घसीटकर भूसा-घरमें न ले गये होते। भाईने बाहरसे कुण्डी लगाकर उन्हें अन्दर बन्द कर दिया, गायें क्रोधसे काँप रही थीं और सींगसे दरवाजा पीटने लगीं। उन्होंने गायोंको सहलाया। जैसे-तैसे गायें शान्त हुईं, फिर भी वे बार-बार उस कमरेकी ओर देखती थीं कि इनको मारनेवाला कमरेके भीतर घुसा है। बादमें जैसे-तैसे उनको वहाँसे निकाला गया। उनके चरित्रमें लिखा है कि उन्होंने कहा अपने बड़े भाईसे कि भाईसाहब! आप मेरे बड़े भाई हैं, पिताके तुल्य हैं। आप हमको गोशालासे बाहर बुलाकर दस-

पाँच लाठी भी मार लेते तो भी कोई बात नहीं थी, लेकिन आपने मुझे गोशालामें मारा, यह ठीक नहीं किया। मैं गायोंकी सेवा करता हूँ। आज यदि मैं सावधान नहीं होता तो गायें आपको छोड़ती नहीं, अतः गाय बहुत ही कृतज्ञ प्राणी है।

जो व्यक्ति गायकी सेवा नहीं करता, जिसका गायके प्रति आदर नहीं है, वह व्यक्ति कृतघ्न है और कृतघ्नका कल्याण कभी नहीं हो सकता; क्योंकि समग्र सृष्टिपर गायका जितना उपकार है, उतना उपकार अन्य किसी भी प्राणीका नहीं है।

भगवान् कृपा करे, ऐसी सद्‌बुद्धि हम सबको प्रदान करे कि जितने लोग हैं—जितने साधु, सन्त, महात्मा वे सब एक साथ, एकजुट हो करके गोरक्षाके सम्बन्धमें विचार-विमर्श करें। गाँव-गाँव, घर-घरमें इस प्रकारके भावोंका प्रचार-प्रसार किया जाय कि जबतक पूरे भारतमें गोवध पूर्ण प्रतिबन्धित न हो, तबतक हमलोग चैन नहीं लेंगे।

वास्तवमें जबतक पूरे भारतवर्षमें गोवधपर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायगा, तबतक इस समस्याका समाधान सुलभ नहीं दिखायी पड़ रहा है। गोवधपर पूर्ण प्रतिबन्ध हो और फिरसे हमारी गोभक्ति जाग्रत् हो। गाय दीन-दुःखी हो तो हम उसे चारा-भूसा और आश्रय दें।

गोरक्षामें ही राष्ट्रका विकास है, राष्ट्रका हित है एवं राष्ट्रकी वास्तविक उन्नति है, समृद्धि और सम्पन्नता है। ग्राम-पंचायत, नगरपालिका, नगर-परिषद् आदि स्तरपर सरकारकी ओरसे गोसदन खोले जायँ तो इस प्रकारसे लाखों लोगोंको तो रोजगार मिल जायगा और बहुत बड़े-बड़े जंगल एवं पहाड़ आज भी हैं, उनका उपयोग गोचारणके लिये किया जा सकता है। इस तरहसे बहुत बड़ा कार्य हो सकता है। भगवान्‌से यह प्रार्थना करें कि हे प्रभो! ऐसी सात्त्विकता समाजमें आये कि गोवध बन्द हो। गोरक्षार्थ कम-से-कम एक माला जप भी किया जाय। इतनेसे ही बहुत बड़ा कार्य हो जायगा।

कथा आती है कि जनकमहाराजको जब नरकसे होकर ले जाया गया तो उनके जानेपर नरकके प्राणियोंको बड़ी शान्ति मिली। वे कहने लगे—महाराज! आप थोड़ा यहीं ठहरिये, तो जनकमहाराज रुक गये। सबने जनकमहाराजकी जय-जयकार की। तब जनकजीने धर्मराजजीसे पूछा कि हमने सुना है कि पापी मनुष्य ही यमलोक आते हैं, तो मुझे भी अपने पापकर्मके विषयमें जिज्ञासा है, बतलानेकी कृपा करें। इसपर धर्मराजने चित्रगुप्तसे पूछा। वे बोले—महाराज! ये तो महान् निष्काम कर्मयोगी हैं, इनके पुण्योंका तो कोई लेखा-जोखा और सीमा ही नहीं है, हाँ; एक पाप इनसे बन गया था धोखेसे। एक गाय सरोवरकी ओर जा रही थी, इन्होंने उसको हाँक दिया था। प्रकारान्तरसे प्यासी गायको पानी पीनेमें बाधा दी थी। यद्यपि उसमें भी इनकी भावना यह थी कि कहीं यह गाय कीचमें न धँस जाय। इसी भावसे इन्होंने गायको रोका था। बस इसी दोषके कारण इन्हें नरक देखना पड़ा। अतः बहुत सावधान रहना चाहिये कि कहीं भी किसी भी प्रकारसे गायके प्रति कोई अपराध न बन जाय।

जहाँ हरि, हर, गुरु और गायकी निन्दा हो रही हो, ऐसी जगहपर जाना नहीं चाहिये। कदाचित् पहुँच गये तो निन्दाका श्रवण नहीं करना चाहिये—कानोंपर हाथ रख लेना चाहिये अथवा वहाँसे अन्यत्र चला जाना चाहिये।

शिवाजी महाराजके बाल्यकालकी घटना है। अपने पिताके साथ वे बादशाहके यहाँ जा रहे थे। बीजापुरकी बात है। रास्तेमें एक कसाई गायको घसीटते हुए ले जा रहा था और वहाँके बाजारके जो हिन्दू थे, वे सिर झुका करके बैठे थे। मुगलशासन था, कौन क्या कर सकता था? उस समय शिवाजीकी उम्र दस वर्षकी भी नहीं थी, नौ-दसके बीचकी रही होगी। बालक शिवाजीने तलवार खींची और पहले तो गायकी रस्सी काटकर उसे बन्धनमुक्त कर दिया और वह कसाई कुछ कहे, इससे पहले

शिवाजी द्वारा गो-रक्षा

ही उसके मस्तकको धड़से अलग कर दिया—यह है शौर्य।

प्राचीन समयमें इतनी बड़ी संख्यामें गोधन हमारे देशमें था कि जब ग्वारिया गायोंको लेकर आते तो गायोंके खुरोंसे इतनी रज उड़ती थी कि दिनमें ही सूर्यास्तका अनुभव होता। महाभारतके 'अनुशासन-पर्व' में आता है कि धर्मराज युधिष्ठिरके यहाँ दस हजार गोसदन थे—गौवर्ग थे, तो वर्ग क्या है? एक वर्गमें ८ लाख गायें थीं। इससे लगता है कि जनसंख्या कम थी, गायें ज्यादा थीं। आगे फिर लिखा है कि एक लाख, दो लाख पचास हजार, तीन लाखके गोसदन तो अनेक थे।
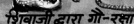
महाभारतमें जहाँ पितामह भीष्मने युधिष्ठिरमहाराजको दान-धर्म, मोक्ष-धर्म, राज-धर्म आदिका विस्तृत उपदेश दिया है, वहीं गो-महिमाका भी बड़ा विस्तृत वर्णन किया है। उस समय पितामहके निकट जब युधिष्ठिर आये थे तो वे एक विशिष्ट रथपर बैठकर आये थे। उस रथके वर्णनमें लिखा है कि आठ हाथियोंके समान विशालकाय पुष्ट बैल उस रथमें लगे हुए थे। उन बैलोंकी चन्द्रमाके समान सफेद कान्ति थी, लेकिन जब पितामह भीष्मने गो-महिमाका

वर्णन किया तो फिर युधिष्ठिर लौट करके उस बैलवाले रथपर बैठ करके नहीं गये और बोले—अरे, ये इतने श्रद्धेय, पूज्य हैं तो ये हमको ढोकर ले जायँ, यह ठीक नहीं है। फिर घोड़ेवाले रथपर बैठकर गये। यद्यपि सवारीके रूपमें गाड़ीमें बैलका उपयोग किया जा सकता है, वह अशास्त्रीय नहीं है, पर उसपर उसकी सामर्थ्यसे अधिक भार लादना, इक्काबैलको जोतना अथवा उसको लाठी, डण्डे या चमड़ेकी चाबुकसे प्रताड़ित करना—यह अधर्म है। इसका शास्त्रमें स्पष्ट निषेध किया गया है। शास्त्रमें आया है कि बैलको पत्तोंसे युक्त जो पेड़की टहनी है, उससे सहारा देकर हाँकना चाहिये, जिससे उसको पीड़ा तथा कष्ट न हो। एक घटना हमारे बाल्यकालकी है। घरमें ही दो बैल थे। एकका नाम था पन्नालाल और दूसरेका पतंगीलाल। इनके कन्धेपर जो गाड़ीका जुआ रखे, उसके लिये इनाम रखा गया था। वे ऐसे शौर्यसम्पन्न बैल थे कि उन्हें कोई गाड़ीमें लगा दे, किसीकी हिम्मत नहीं थी। बैल इतने तेज थे कि जबतक बैलोंके ऊपर कोई जुआ रखे; तबतक तो वे उछल जाते थे। बड़े-बड़े लोग आये इनाम सुनकर, हाथ-पैर तुड़वाकर चले गये और जब दौड़ होती तो सबसे आगे वे होते। तो उस समय बड़ा शौक था लोगोंको। बैलोंको ऐसा सजा-धजाकर रखते थे। दीपावली आदि उत्सवोंमें तो सोने-चाँदीके आभूषण भी गाय-बैलोंको धारण करवाते थे। यह अनूठा बैल किसका है? इसके उत्तरमें 'यह हमारा बैल है'—ऐसा कहनेमें लोगोंको बड़ा गौरव होता था। आज तो चारों तरफ गाय-बैलोंकी दुर्दशा हो रही है। यह बड़े दुःख और दुर्भाग्यकी बात है।

गायकी समृद्धिसे ही इस देशकी समृद्धि निश्चित है। पृथ्वीका आहार ही गोबर और गोमूत्र है। गाय पृथ्वीको आहार प्रदान करती है। आज धरती भूखी है, उसको गव्य-पदार्थ नहीं मिल रहा है।

जो गायके विरोधी हैं, वे भगवान्, धर्म, गुरु और वेद—इन सबके विरोधी हैं। हमारा चाहे जैसा स्वार्थ हो, लेकिन हमें गायका विरोध

करनेवालेके पक्षमें जाकर खड़ा नहीं होना चाहिये, चाहे जैसा पद-प्रतिष्ठाका लालच हो, ऐसे लोगोंको अपना मत भी नहीं देना चाहिये। गायके प्रति जिनकी निष्ठा नहीं, श्रद्धा नहीं, गायकी रक्षा जो नहीं चाहता। ऐसे व्यक्ति या दलको अपना मत देनेका तात्पर्य है कि हम गोवधमें हिस्सेदार बन रहे हैं और निश्चित ही हम गोवधके भागी भी होंगे। इस सम्बन्धमें बहुत सावधानी रखनी है।

शंकरजीके ध्वजपर वृषभ अंकित है इसीलिये उनको वृषभध्वज, 'वृषभांक' कहा जाता है। इसका मतलब है शंकरजी परम गोभक्त हैं और वे भगवान्‌के गोलोक धामके ग्वारिया हैं, इन्हें 'पशुपति' पदपर अभिषिक्त किया गया है।

गोरक्षाके लिये की जानेवाली भगवान्‌की स्वल्प भी आराधना-उपासना निष्फल नहीं होती है। एक गायकी भी यदि प्राणरक्षा हो रही है और वह गाय यदि सुखी है तो हमें गोरक्षाका पुण्य मिल ही रहा है—ऐसा विचार करके मन, वाणी और कर्मसे इस पवित्र कार्यमें सहयोगी बनना चाहिये।

गोवधके विषयमें सही बात तो यह है कि विधर्मियोंने गोसेवक हिन्दुओंकी भावनाओंको आहत करनेके लिये, उनको नीचा दिखानेके लिये ही यह कार्य प्रारम्भ किया और दूसरा कोई प्रयोजन नहीं था। एक सज्जन हमारे परिचित हैं, अच्छे विद्वान् हैं, उन्होंने सम्पूर्ण बाइबिल और कुरान देखी है। वे कह रहे थे कि इन ग्रन्थोंमें कहीं स्पष्टरूपसे नहीं लिखा है कि गोहत्या की जाय। फिर गोहत्या कहाँसे आयी? विधर्मियोंका जब शासन इस देशपर हुआ तो उन्होंने देखा कि इस समाजकी सर्वाधिक श्रद्धा कहाँ है? तो उन्हें गाय ही नजर आयी, फिर क्या था, उन्होंने सबसे पहले गोवध करना प्रारम्भ किया, लेकिन जब वे लोग यहाँ रहे, यहाँकी पवित्र रजका उन्हें स्पर्श प्राप्त हुआ, यहाँकी पवित्र वायुका स्पर्श प्राप्त हुआ, यहाँकी पवित्र गंगा-यमुना आदि नदियोंके दर्शन, पान और स्नानसे वे भी कुछ अंशमें पवित्र हो गये

तो उनमें भी कुछ शासक ऐसे हो गये, जिन्होंने म्लेच्छ होनेपर भी गोवधपर प्रतिबन्ध लगाया, ऐसी बात इतिहासमें मिलती है।

मुगलशासक हुमायूँकी एक बात सुननेको मिलती है कि उसकी थालीमें मांस रखा गया तो उसने पूछा—किसका मांस है, तो बावर्चीने बताया गोमांस है। वह बहुत नाराज हुआ। थाली फेंक दी और कहा—इस बावर्चीको ५० कोड़े लगाओ और कहो कि आइन्दा कभी ऐसा न करे। इसका कारण क्या है? पूछनेपर उसने बताया कि बचपनमें मेरी माँ मर गयी थी और मेरा पोषण गायके ही दूधसे हुआ था तो फिर जिस गायसे हमारा पोषण हुआ है, उस गायको हम खायें, ऐसे मुसलमान हम नहीं हैं। उसने इस प्रकारका विचार किया। अब यह कहाँतक सत्य है, इसको तो भगवान् ही जानें, परंतु सुननेमें ऐसा आता है।

अकबरने स्वामी श्रीहरिदासजीके, अन्य सन्तोंके तथा तुलसीदासजी और सूरदासजीके प्रभावमें आकर अपने शासनमें गोवधपर प्रतिबन्ध

लगाया था। इसके भी प्रमाण प्राप्त होते हैं और ब्रजक्षेत्रमें तो जीवहिंसापर प्रतिबन्ध था। फिर जहाँगीरके कालमें कट्टरता रही, परंतु उस समय पंजाबमें पिण्डौरी धामके संत बाबा महेशदासजीके सम्पर्कमें आनेके बाद उसने भी गोवधपर प्रतिबन्ध लगाया था।

शाहजहाँने अपने पन्थके मुल्ला-मौलवियोंसे पूछा कि हमारे पूर्वजोंने तलवारकी नोकपर इनको इस्लाम बनाना चाहा फिर भी क्या बात है हिन्दू धर्म सुरक्षित है? तो उस समय उसके सलाहकारोंने यह सलाह दी कि 'जबतक सन्त-महात्माओंकी जमातें गाँव-गाँव घूमती रहेंगी, कथा, वार्ता, सत्संग चलते रहेंगे, तबतक चाहे जितनी बर्बरता आप दिखायें, हिन्दूधर्मको नष्ट नहीं किया जा सकता, इनकी गोभक्तिको मिटाया नहीं जा सकता। इसका एक ही उपाय है—ये साधु-सन्तोंकी जमातें जो घूम रही हैं, उनके घूमनेपर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जाय।'

शाहजहाँने ऐसा ही आदेश कर दिया, लेकिन बाबा मलूकदासजीने शाही फरमानका उल्लंघन करके जमातके साथ सारे भारतका भ्रमण किया। दिल्ली पहुँचनेपर शाहजहाँने उन्हें कैद कर लिया तो सारे जेलकी चक्कियाँ अपने-आप चलने लगीं। जेलके कैदियोंकी हथकड़ी-बेड़ी खुल गयी। जेलके कर्मचारी जडवत् हो गये। वे बाबाका कुछ भी नहीं बिगाड़ सके। बाबा जमातके साथ वृन्दावन आ गये, उधर शाहजहाँके पूरे शरीरमें भयंकर जलन होने लगी जो किसी तरह ठीक नहीं हुई। सच्चे साधुके अपमानका यह फल था। तब वह बाबा मलूकदासजीकी शरणमें आया। बाबाने उससे गोवधके निषेधके साथ अन्य भी शर्तें स्वीकार करवायीं। तब वह स्वस्थ हुआ। इस बातका भी ऐतिहासिक प्रमाण है कि वैष्णवोंके १६ अखाड़ोंके सन्तोंने हिन्दू राजाओंके साथ मिलकर मुसलमानोंके विरुद्ध गोरक्षाकी लड़ाइयाँ भी लड़ी।

कहनेका तात्पर्य यह है कि उस कालमें सन्तोंके प्रभावमें आकर उन राजाओंने भले ही कुछ सीमित कालके लिये ही सही, गोवधपर

प्रतिबन्ध लगाया और बड़ी आशा थी लोगोंको कि ये अंग्रेज गोभक्षी हैं, ये चले जायँगे यहाँसे तो गोवधपर प्रतिबन्ध लग जायगा, पर उन गोरे अंग्रेजोंसे ये काले अंग्रेज बहुत आगे निकल गये। आज गोवंशके साथ जो अत्याचार हो रहा है, वह किसीसे छिपा नहीं है। आज तो गोरक्षा और गोसेवाकी भावना और भी निरन्तर कम होती जा रही है।

अंग्रेजोंके समय भी गोवध होता था, लेकिन हमारे गोसदन भरे हुए थे। दूध-दहीकी प्रचुर उपलब्धता थी। गोघृतकी भरपूर उपलब्धता थी। विचार करनेपर यह बात बुद्धिमें आती है कि स्वतन्त्रताके पहलेतक सन्तोंकी बहुत जमातें घूमती थीं। राजा श्रीरघुवीरदासजी महाराज चित्रकूटवालोंकी जमातके सम्बन्धमें पुराने सन्तोंसे आज भी सुननेको मिलता है। १२००-१२०० साधु जमातमें होते थे। उड़िया जगन्नाथदासजी महाराजकी जमात हजार-हजार, दो-दो हजार साधुओंकी होती थी। अयोध्यावाले खाक चौकके महन्त श्रीअर्जुनदासजी महाराजकी जमात एवं उस समय सैकड़ों सन्तोंकी जमातें भारतवर्षमें घूमती थीं और गाँव-गाँवसे होकर निकलती थीं। जिस गाँवमें रुकतीं, वहाँ महीना-पन्द्रह दिन ठाकुरजीका दरबार सज जाता। शंख, घंटा, घड़ियाल बजने लगते, लोग दौड़-दौड़कर आने लगते। आरती, सेवा, पूजा होती और एक खास बात यह कि जमातके साथ गायें चलती थीं। एक-एक जमातके साथ २०० से ४०० तक गायें चलतीं। ठाकुरजीको दूधका भोग धराना है, गैयाका गोबर चाहिये—यह सब कहाँसे होगा? तो गायें भी जमातके साथ चलती थीं और वहाँ कथा, कीर्तन-सत्संग, सेवा, पूजा होती तो गाँव-के-गाँव भक्त बन जाते, उन तमाम लोगोंमें गोसेवाके प्रति संस्कार जाग्रत् हो जाते।

आज जनजागरण और धर्मप्रचारका कार्य जैसा होना चाहिये, वैसा नहीं हो रहा है। इसलिये आवश्यक है कि गाँव-गाँवसे साधु-महात्मा घूमते हुए निकलें। गीताजी, रामचरितमानसका पाठ हो, कथा-कीर्तन हो,

सत्संग हो तथा जन-जनमें गायके प्रति सेवा-भावना जाग्रत् की जाय, गायके प्रति महत्त्व बुद्धि जाग्रत् की जाय। गोरक्षाके कार्यमें लोग सन्नद्ध हों तो गोरक्षा होना कोई असम्भव कार्य नहीं है। पूरे देशमें सन्तोंका विचरण हो और एक ही संकल्प लेकर विचरण हो कि चाहे जैसे भी हो गायके प्रति लोगोंकी श्रद्धाबुद्धि, महत्त्वबुद्धि बने।

कहनेका तात्पर्य यह है कि परम विरक्त, त्यागी और लोककल्याणकारी भावना रखनेवाले सन्तोंद्वारा इस दिशामें बहुत बड़ा कार्य हो सकता है।

गोरक्षा-आन्दोलनमें कितने ही साधु मारे गये। एक साधु खाक चौकमें आते थे, अपंग थे। उनके शरीरमें कई जगह गोलियाँ लगी थीं। वे आँखोंदेखी घटना सुनाते थे तो रोना आता था। उन्होंने बताया कि गोपाष्टमीके दिनकी बात है, गोरक्षकोंके ऊपर गोलियोंकी बौछार की गयी। सैकड़ों साधु मारे गये, कुछको जला दिया गया, कुछको दफना दिया गया और कुछको गटरोंमें डाल दिया गया। ऐसा भयंकर अत्याचार अंग्रेजी हुकूमतमें भी नहीं हुआ। गोपाष्टमी-जैसी पवित्र तिथिपर सत्याग्रह करनेवाले गोभक्तोंपर महान् अत्याचार हुआ।

अतः हम सबका कर्तव्य है कि गोमाताकी सेवा और रक्षा करते हुए हम अनन्य भावसे भगवान्‌की उपासनामें प्रवृत्त हो जायँ। प्रार्थनामें बहुत बड़ी शक्ति है, बहुत बड़ी सामर्थ्य है। यह एक बहुत उत्तम और सहज उपाय कि हम नित्यप्रति अपने इष्टमन्त्रकी कम-से-कम एक माला अथवा किसी स्तोत्रका पाठ गोरक्षाके निमित्त करें। भगवान् कृपा करके सबको सद्‌बुद्धि दें।